चन्दामामा
अप्रैल १९६१
50
NP

Photo by Pranlal K. Patel

पुरस्कृत परिचयोक्ति

तुम प्राचीन के पुजारी!

प्रेषक :

रेमी
स्नो और
पाउडर

अप्रैल १९६१

विषय - सूची

★

एक प्रति ५० नये पैसे वार्षिक चन्दा रु. ६-००

अब

अपना
मनचाहा स्वास्थ्यवर्धक
वाटरबरीज़ कम्पाउन्ड
विटामिन युक्त
लीजिए

अब आप भारत का मनचाहा और स्वास्थ्यवर्द्धक टॉनिक विटामिनयुक्त खरीद सकते हैं। वाटरबरीज़ कम्पाउन्ड के प्रसिद्ध प्रणाली में स्फूर्तिदायक बहुमूल्य विटामिनों का समावेश किया गया है। यह बीमारी के बाद की कमज़ोरी को दूर कर शरीर में नयी ताकत और स्फूर्ति पैदा करता है। खून साफ़ करना, स्नायुओं और ज्ञानतन्तुओं में नया जीवन लाना और शरीर में बीमारी को रोकने की अद्भुत शक्ति पैदा करना यह सब वाटरबरीज़ विटामिन कम्पाउन्ड के विशेष गुण हैं।

वाटरबरीज़
विटामिन
कम्पाउन्ड

आपकी खुराक का पूरक।

लाल लेबलवाला क्रियोसोट तथा ग्वायकोलयुक्त वाटरबरीज़ कम्पाउन्ड हर जगह मिलता है जो सर्दी और खाँसी के लिए बेजोड़ है।
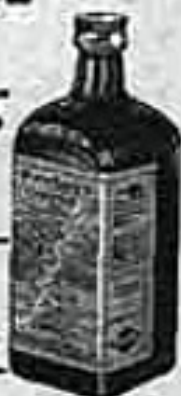
LIFEBUOY
SOAP

अप्रैल १९६१

मैं 'चन्दामामा' की हिन्दी प्रति हर मास लेता हूं। मेरा विश्वास है कि सारे भारत में प्रकाशित होनेवाले मासिक पत्रों में सबसे अधिक लोकप्रिय 'चन्दामामा' ही है। उसको सभी वर्ग और आयु के व्यक्ति बड़े चाव से पढ़ते हैं, चन्दामामा की रोचक और अनोखी कहानियाँ अपने सुन्दर लुभावने चित्रों से हमारे मन को मोहित किए बिना नहीं रहतीं। सच तो यह है कि 'चन्दामामा' अपने किस्म का एक ही पत्र है। जो सर्वप्रिय होने के साथ साथ भारतीय संस्कृति को भी लिए हुए है।

जगपालकृष्ण भटनागर, नई दिल्ली.

"हमारे घर में आपका बच्चों का मासिक पत्र चन्दामामा विगत कई वर्षों से आ रहा है। मेरे छोटे भाई बहिन माह के अन्तिम सप्ताह में इसकी प्रतीक्षा उतनी व्यग्रता से करते हैं जितनी कि कोई परीक्षार्थी अपने परीक्षा-फल की करता है। सचमुच यह भारत वर्ष की एक गौरवपूर्ण कृति है, जिस पर इस देश के बच्चों को गर्व है। कहानी तो इस में इतनी सरस छपती है, जैसे कि कोई बढ़िया पका हुआ रसीला आम।"

जगदीश कुमार शर्मा, कानपुर.

मैं आपके चन्दामामा को छ (६) वर्ष से लगातार पढ़ रहा हूं। यह बच्चों के लिए बहुत सुन्दर पत्रिका है। हम सारे परिवारवाले बेचैन रहते हैं कि कब चन्दामामा आये और हम उसे पढ़ें। इस में धारावाहिक उपन्यास और चित्र-कथा मुझे बहुत पसन्द है। यह केवल बच्चे के लिए ही नहीं अपितु वयस्क के लिए बहुत उपयोगी है।

शिवचन्द्र भाटिया, देहली.

चन्दामामा में लगभग छः साल से पढ़ रही हूँ, उसमें रोचक सामग्री, मनोरंजन कहानियाँ, बच्चों को ही नहीं वरन् बड़ों को भी मनोरंजन प्रदान करती हैं, यदि उसमें पहले के ही तरह रंगभरो प्रतियोगिता, या और कोई प्रतियोगिता आरम्भ करे तो अति उत्तम होगा।

वास्तव में चन्दामामा भारत की अन्य बाल पत्रिका में उच्च कोटि की प्रकाशित होती है।

हम सब बहनें उत्सुकता से "चन्दामामा" की प्रतिक्षा करते हैं।

कुमारी ललिता मिश्रा, कानपुर.

"मैं आज छ साल से चन्दामामा पढ़ रहा हूँ। यह मासिक पत्र बच्चों के लाभदायक जितने भी पत्र हैं निस्संदेह यह सब में सर्वश्रेष्ठ है, यह दिमागी भूख को शांत करने का एक अच्छा भोजन है। इसकी लोकप्रियता के कई प्रमुख कारणों में इसकी मनोरंजक कहानियाँ और आकर्षक चित्रकला है। मेरे घर जब अखबार वाला "चन्दामामा" दे जाता है तो मैं आनन्द से फूला नहीं समाता हूँ। सब से पहिले मैं अपनी क्लास में ले जाकर अपना रोब जमाता हूँ। सब कोई इस के लिए छीना झपटी शुरु कर देते हैं तो मैं अपने आपको गौरवित समझता हूँ। इसकी धारावाहिक कहानियाँ बड़ी रोचक होती हैं जिसको पढ़कर मन उसे और आगे जानने के लिए उत्सुक हो जाता है। सच बात तो यह है कि चन्दामामा यदि किसी के हाथ आ जाय तो वह इसे सरलता से नहीं छोड़ता है।

असीम कुमार दास, इलाहाबाद.

कोलगेट से दिनभर दुर्गंधमय श्वास से मुक्त रहिए और दन्त-क्षय को रोकिए !

अधिक साफ़ निर्मल श्वास व सफ़ेद दांत के लिए ... सारी दुनिया में अधिकाधिक लोग किसी दूसरी डेन्टल क्रीम की अपेक्षा कोलगेट ही खरीदते हैं

चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

संस्कृत साहित्य में किरातार्जुनीयं प्रसिद्ध ग्रन्थ है। इसके लेखक भारवी हैं। भारवी के जीवन की एक घटना इस अंक में जा रही है। हम आशा करते हैं कि पाठक इसे मनोरंजक पायेंगे।

इधर हम कई मास से संस्कृत के प्रसिद्ध नाटकों का कथानुवाद "चन्दामामा" में देते आ रहे हैं।

हम इस तरह अपने पाठकों को संस्कृत के समृद्ध साहित्य से परिचित करने का प्रयत्न कर रहे हैं।

जैसे हम इस समय संस्कृत के नाटकों का अनुवाद दे रहे हैं, यथासमय और भाषाओं के नाटकों का अनुवाद भी देंगे।

वर्ष : १२   अप्रैल १९६१   अंक : ८

उषा

जब सृष्टि बनी, तो जल में से भूमि निकली। भूमि पर प्राणी आदि सब पैदा हुए। किन्तु सूर्य न था। इसलिए सब प्राणियों को अन्धकार में रहना पड़ता था। मनुष्यों को हिंस्र जन्तुओं का भय अधिक था।

अन्धकार के कारण वे अपने काम-काज भी न कर पाते थे।

इस तरह कुछ काल के बीत जाने के बाद मनुष्यों में एक ज्ञानी हुआ। उसने औरों से यों कहा—"ब्रह्मा ने शेष सृष्टि के साथ सूर्य भगवान की भी सृष्टि की थी। यदि हममें से किसी ने जाकर सूर्य भगवान से प्रार्थना की तो वे कृपा करके हमें प्रकाश देंगे। तब हमें प्रकाश और गरमी मिलेगी। हम तब आराम से अपना काम कर सकेंगे।"

यह विचार सब को जँचा। पर सूर्य भगवान को निमन्त्रण देने कौन जाये? और कैसे जाये?

साठ वर्ष के एक बूढ़े ने कहा—"बच्चो, मैं तो बूढ़ा हो गया हूँ। मेरे कारण तुम्हारा कोई लाभ नहीं है। परन्तु मेरे पैरों में अब भी शक्ति है। मैं सूर्य भगवान के पास जाकर काम पूरा करके आता हूँ।"

इस पर एक युवक ने कहा—"बाबा, यह बूढ़ों से होनेवाला काम नहीं है। कहा नहीं जा सकता कि यात्रा में कितने दिन लगें। मैं जाऊँगा। रास्ते में जो कोई कष्ट आयेंगे, मैं उन्हें झेल सकता हूँ। मुझे जाने दिया जाय।"

तब एक लड़के ने कहा—"इस यात्रा में बहुत दिन लग जायेंगे। मेरी आयु दस

वर्ष की है, मैं जब बूढ़ा हो जाऊँगा, तब तक मैं सूर्य भगवान के पास जा सकूँगा। आप में से इस दूर की यात्रा पर मेरे सिवाय कोई नहीं जा सकता।"

सब ने सोचा कि उसकी बातों में कुछ सचाई थी।

तब लोगों में बीस वर्ष की एक स्त्री ने उठकर यों कहा।

"तुम सब गलती कर रहे हो, यह एक पीढ़ी में होनेवाला काम नहीं है। मुझे जाने दो। मेरे गर्भ में एक लड़का बड़ा हो रहा है। मैं सूर्य भगवान के पास तो पहुँच नहीं सकती। पर मेरा लड़का, जो रास्ते में पैदा होगा, कभी न कभी सूर्य के पास पहुँच सकेगा। इस तरह हमारा कार्य सम्पन्न हो सकेगा।"

उस स्त्री का नाम उषा था, उसकी बात सब को जँची। जब वह जाने लगी, तो उसने कहा—"मैं जिस दिशा की ओर जाऊँ, उसी ओर देखते रहना। जब काम हो जायेगा या तो मैं बड़ी आग करूँगी, नहीं तो अपने लड़के से करवाऊँगी। उस आग को देखकर समझ लेना कि सूर्य भगवान मिल गये हैं।"

वह एक दिशा की ओर सीधे चलने लगी। इस तरह आठ महीने यात्रा करने के बाद, उसने एक लड़के को जन्म दिया। फिर दोनों मिलकर यात्रा करने लगे। आगे बढ़ते गये।

उषा के गये सत्तर वर्ष बीत गये। वह बड़ी बूढ़ी हो गई। उसने एक दिन अपने लड़के से कहा—"बेटा, मैं अब नहीं चल सकती। शेष यात्रा तुम्हें ही करनी होगी। जब सूर्य भगवान की कृपा हो, तो बड़ी-सी आग बनाना, उसे देख हमारे लोग खुश होंगे। समझ जायेंगे कि काम हो गया है।"

उषा ने जिस आग के बारे में कहा था, उसको देखने के लिए लोग उस ओर देखते रहे, जिस ओर वह गई थी। उसके जाने के सौ वर्ष बाद, उस दिशा में लाल प्रकाश दिखाई दिया। लोग बड़े खुश हुए।

"वह देखो हमारी उषा ने काम पूरा कर दिया है। अब हमारे लिए सूर्य भगवान उदित हुआ करेंगे। उन्होंने तुरत अपने काम शुरु कर दिये। फिर सूर्य भगवान के उदित हो जाने के बाद लोगों को प्रकाश, सुख, आनन्द और आरोग्य आदि, मिले।" सृष्टि सुखमय बनी।

आज भी काम करनेवाले, उषा के लिए वह जिस दिशा की ओर जाती है, उस ओर देखते है। उषा के आते ही काम शुरु कर देते हैं, सूर्य के निकलने तक नहीं रुकते।

यही नहीं, मनुष्यों ने उषा से एक और बात सीखी। वह यह कि यदि मनुष्यों को कोई महान कार्य सम्पन्न करना है, तो वह एक मनुष्य से सम्भव नहीं, एक पीढ़ी में सम्भव नहीं—कई पीढ़ियों में ही वह काम किया जा सकता है—यानि असम्भव कार्य भी कई पीढ़ियों में सम्भव हैं।

स्यमंतकमणि

तृतीय अध्याय

मणि धारण कर प्रसेनज़ित वह
फूला नहीं समाया मन में,
शिकार के हित सज-धजकर वह
गया एक दिन खुश हो वन में।

साथ कई थे साथी उसके
घोड़े पर थे सभी सवार,
धनुष-बाण से सज्जित थे सब
लिये हुए थे सब तलवार।

काल सरीखा उनको लखकर
लगे भागने हिरण अधीर,
छोड़ रहे थे निर्मम होकर
सभी शिकारी जिनपर तीर।

जरा देर पहले जंगल में
मंगल पशु-खग मना रहे थे,
किंतु वहीं अब भाग-भाग कर
खैर जान की मना रहे थे।

ऐसी भगदड़ मची कि फिर तो
वन ही सारा हुआ अशान्त,
लगे दौड़ने सभी शिकारी
पशुओं के पीछे अक्लान्त।

प्रसेनजित ने एक हिरण पर
छोड़ा अपना तीखा बाण,
लेकिन उसको लगा नहीं वह
भागा लेकर अपनी जान।

प्रसेनजित ने उसके पीछे
घोड़े को दौड़ाया शीघ्र,
किंतु हिरण को पा न सका वह
थी उसकी गति ऐसी तीव्र।

साथी पीछे छूट गये सब
रह गया प्रसेन अकेला,
क्रूर नियति ने तभी मृत्यु के
मुख में उसे धकेला।

"यात्रिक"

झपटा सिंह अचानक उसपर
गये पलक में उसके प्राण,
घोड़ा भी वह बचा न, उसकी
भी ले ली उसने झट जान।

सिंह विजय पर अपनी गरजा
भरी एक उसने हुँकार,
काँप उठा जिससे वन सारा
दहल उठा मानों संसार।

सुनकर उसकी गरज, गुफा से
निकला एक भयानक रीछ,
पल में डाला मार सिंह को
था ऐसा बलशाली रीछ।

देखा उसने वहीं पड़ा था
प्रसेनजित का मणि अति सुन्दर,
जिसे उठाकर चला गया वह
शीघ्र गुफा के अपने अन्दर।

वहाँ खेलता था झूले में
उसका सुन्दर शिशु सुकुमार,
लटकाया उसके ऊपर ही
उसने मणि का उज्ज्वल हार।

इधर साथियों ने प्रसेन को
बहुत बहुत खोजा उस वन में
किंतु न उनको मिला पता कुछ
हुए बहुत आशंकित मन में।

लौट नगर को सत्राजित से
कहा उन्होंने जब सब हाल,
तरह तरह की शंकाओं के
मारे हुआ बहुत बेहाल।

था उसको संदेह कि शायद
चली कृष्ण ने ही यह चाल,
मणि की खातिर बना वही है
प्रसेनजित का शायद काल।

मणि का लोभ उसे ही तो था
थी उसको ही मुझसे डाह,
सोच-सोच यह सत्राजित ने
फैलायी ऐसी अफवाह।

गली-गली में फिर तो इसकी
होने चर्चा लगी हमेशा,
बुरा कृष्ण को ही कहते सब—
अरे धूर्त वह रहा हमेशा!

यों जल्दी ही प्रजा-दृष्टि में
हुए कृष्ण लांछित औ' हीन,
सुनी कृष्ण ने भी सब बातें
हुए बहुत चिंता में लीन।

लगा कलंक है मेरे सिर जो
उसका तो आधार नहीं है,
करूं दूर मैं इसे न यदि तो
मेरा अब निस्तार नहीं है।

सोच कृष्ण यह हुए तुरत ही
वन को जाने को तैयार,
कहा उन्होंने सबसे—"जाता
मैं हूं करने जरा शिकार!"

सत्राजित को लगे ढूंढने
घूम घूम वे गहन वनों में,
भूख-प्यास की रही न चिंता
रहे घूमते गहन वनों में।

चलते चलते आखिर पहुँचे
उसी गुफा के बिलकुल पास,
जहाँ रीछ वह महा भयानक
करता था निर्द्वन्द्व निवास।

शव प्रसेन का वहीं पड़ा था
घोड़ा भी बिलकुल निष्प्राण,
किंतु न मणि का पता वहाँ था
हुए कृष्ण मन में अतिम्लान।

दिखा सिंह भी मृत पास ही
नहीं वहाँ पर भी वह मणि था,
खोज-खोजकर थके बहुत ही
नहीं कहीं पर भी वह मणि था।

रीछ एक था गया वहाँ से
जिसके थे मौजूद निशान,
चले कृष्ण तब उसे देखते
मिले गुफा तक उन्हें निशान।

गुफा-द्वार पर कृष्ण खड़े हो
रहे सोचते पल दो-चार,
रीछ गुफा के ही अंदर है
ऐसा करते रहे विचार।

फिर पीछे मुड़कर मित्रों से
बोले—"मैं अंदर जाता हूँ,
सारी ही बातों का मैं तो
पता लगाकर अब आता हूँ।

तुम सब रहना खड़े यहीं पर
और प्रतीक्षा करना मेरी,
लौटूँगा मैं शीघ्र, न चिंता
तुम सब करना ज्यादा मेरी!"

इतना कह वे घुसे गुफा में
जहाँ घना था अंधकार,
साथी बाहर खड़े रहे सब
करते उनका इंतजार।

[१५]

[पन्द्रह वर्ष बीत गये। अब उग्रदत्त और उसके साथी रुद्र और आरुद्र बीस वर्ष के हो गये थे। वे एक दिन जंगल में घूम रहे थे कि उनको एक स्त्री का आर्तनाद सुनाई दिया। जब वे उसकी रक्षा के लिए गये तो शेर का चमड़ा पहिननेवालों ने उनको पकड़ लिया। वे उनको भयंकर पक्षियों की ओर खींच ले गये। उसके बाद:—]

युवती पर यह दुर्घटना हो गई और उग्रदत्त हैरान रह गया। न उसने, न उसके साथियों ने ही आगे पीछे देखा और फन्दे में सिर दे दिया। वह, रुद्र और आरुद्र अब शत्रुओं के हाथ आ गये थे। "बचाओ" जो स्त्री चिल्लाई थी, क्या वह भी इन लोगों द्वारा पकड़ली गई है! या इनके हाथ से निकलकर किले की ओर भाग गई है!

उग्रदत्त को तुरत ख्याल आया कि उस स्त्री का सुरक्षित वहाँ से भाग जाना असम्भव था। उसका आर्तनाद और शेर का चमड़ा पहिननेवालों ने, तो इस तरह हल्ला किया था कि अनुमान किया जा सकता था कि अगर किले से किसी ने आकर उसकी रक्षा न की, तो वह अवश्य पकड़ ली गई होगी।

"रुद्र" उग्रदत्त ने पुकारा। वह न जान पा रहा था कि उसके मित्र कहाँ थे।

दो शेर का चमड़ा पहिननेवाले, उसको भयंकर पक्षी पर बिठाने का भरपूर प्रयत्न कर रहे थे।

"उग्रदत्त! हाथ पैर बाँधकर, मुझे भयंकर पक्षी पर बिठा दिया गया है। इन लोगों ने आरुद्र को भी पकड़ लिया है। क्या तुम भी पकड़े गये हो!" रुद्र ज़ोर से चिल्लाया।

"करो मुख बन्द" एक शेर का चमड़ा पहिननेवाला ज़ोर से चिल्लाया। "हमने जो ये तीन आदमी पकड़े हैं— वे बड़े मूर्ख लगते हैं। अब यह देखना है कि सामन्त सुदर्शन की लड़की कितनी समझदार है।" उसने इधर उधर के इशारे करके परिहास किया।

उसके बकवास से उग्रदत्त यह जान गया कि वह लड़की कौन थी। वह विजय गर्व में, बिना उसके पूछे ही सब कुछ बता गया। उग्रदत्त ने सोचा कि शायद यह शेर का चमड़ा पहिननेवाला ही मूर्ख है और कोई हो या न हो।

इतने में किले की तरफ़ से हो हल्ला सुनाई दिया। घोड़ों की आहट और घुड़सवारों का चिल्लाना सुन उग्रदत्त ने अनुमान किया कि उसकी मदद के लिए लोग आ रहे थे। राजकुमारी चन्द्रसेना का आर्तनाद किले में सुनाई पड़ा होगा। क्या अच्छा हो, अगर मैं इन रस्सियों को तोड़ सकूँ!

उग्रदत्त जब हाथ पैर चलाने लगा, तो शेर का चमड़ा पहिननेवाले ने ज़ोर से चिल्लाकर, उसकी छाती पर भाला रखकर कहा—"अगर चिल्लाये तो छाती में भोंक दूँगा। खबरदार।" इतने में भयंकर पक्षी आकाश में उड़ गया। उग्रदत्त झटके के कारण पक्षी पर डावाँडोल हो गया।

"अब समय हो गया है। ये दुष्ट हमें अग्निद्वीप ले जा रहे हैं।"

देखते-देखते भयंकर पक्षी आकाश में बहुत ऊँचे उड़ने लगे और मेघों को पार करते पूर्व की ओर जाने लगे। पक्षियों की गति के कारण उग्रदत्त को ज़ोर से हवा लगने लगी। कहीं वह नीचे न गिर जाये, शेर का चमड़ा पहिननेवाले ने उसको ज़ोर से पकड़ रखा था।

इस तरह कुछ समय बीत गया। उग्राक्ष को लगा कि पक्षी ऊपर से नीचे उतर रहे थे। हवा यकायक गरम हो गई। उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि वह लपटों में झुलस रहा हो। इतने में उसको सुनाई दिया—"शत्रु चन्द्रसेना के आदमियों को पक्षियों पर से होशियारी से नीचे उतारो। बाकी उन भल्लूकों से मुकाबला करो।"

"ओहो....अग्निद्वीप में दो गुट हैं।" उग्रदत्त ने सोचा। यह पता लगते ही उग्रदत्त में जाने क्यों बड़ा जोश आ गया। परन्तु जब वे आकाश में भयंकर पक्षियों पर चढ़े चढ़े युद्ध करेंगे तो क्या हम नीचे गिरकर टुकड़े टुकड़े न हो जायेंगे! उसे यह डर भी लगा।

यकायक उग्रदत्त जिस भयंकर पक्षी पर सवार था वह अपनी गर्दन लम्बी करके नीचे उतरने लगा। उग्रदत्त ने सिर ऊँचा करके ऊपर देखा। भालू का चमड़ा पहिने कुछ बड़े बड़े भाले लिए उन भयंकर पक्षियों को और उन पर सवार शेर का चमड़ा पहिननेवालों को उकसाने लगे।

देखते-देखते आकाश में शेर का चमड़ा पहिननेवालों का और भालू का चमड़ा पहिननेवालों का भयंकर युद्ध होने लगा। भालों की चोट से कराहते कराहते कुछ

सवार नीचे गिर गये। और भयंकर पक्षी, जिनके सवार गिर गये थे, पंख फड़फड़ाते चारों ओर भागने लगे।

इतने में उग्रदत्त जिस पक्षी पर था। वह पहाड़ी के ऊपरले भाग में उतरा। उस पक्षी पर से दो सवार उतरे। उग्रदत्त को उन्होंने पक्षी पर से उतारा और उसको इस तरह नीचे फेंका, जैसे वह कोई चटाइयों का गट्ठर हो। सौभाग्य से वह जहाँ गिरा था, बड़ी-बड़ी घास थी। इसलिए उसको चोट न लगी। पर उसे लगा जैसे वह मर ही गया हो।

एक शेर का चमड़ा पहिननेवाला उसके पास आया। उसको हिलाडुलाकर उसने देखा। "अरे, लगता है कि यह मर गया है।" उसने कहा।

इसपर दूसरे ने कहा—"यह मरा हो या ज़िन्दा हमारे लिये सब बराबर है। राजकुमारी हमारे सरदार के महल में सुरक्षित पहुँचा दी गई है। इसकी खबर बाद में लेंगे। पहिले कन्ध के अनुचरों की खबर लेनी होगी। आओ।" कहता वह भयंकर पक्षियों की ओर दौड़ा।

उग्रदत्त उनकी बातें सुनता, चुपचाप लाश की तरह पड़ा रहा। अगर उनको यह पता लगा कि वह जीवित है, तो सम्भव है कि वे उसे मार दें। कन्ध, इन शेर का चमड़ा पहिननेवालों के शत्रुओं का, जो भालू का चमड़ा पहिनते थे, सरदार था। सामन्त सुदर्शन की लड़की चन्द्रसेना को शेर का चमड़ा पहिननेवालों ने अपने सरदार के पास पहुँचा दिया था।

उग्रदत्त ने अपने हाथ और पैरों में बन्धे रस्सियों को तोड़ने की खूब कोशिश की। परन्तु रस्सियाँ और कस गईं और उसे अधिक दर्द भी होने लगा। अब मैं

सूर्य धीमे-धीमे आकाश के बीचों बीच आया। धूप तेज़ हो गई। उग्रदत्त की प्यास के मारे बुरी हालत हो गई।

"भूख और प्यास से मुझे यहाँ शायद मरना पड़े।" उग्रदत्त ने सोचा। अगर वे शत्रु भी आये, जो उसे वहाँ छोड़ गये थे, तो हो सकता है कि मेरे प्राणों की रक्षा हो—उसने सोचा। क्या वे मुझे भूल गये हैं? या भालू का चमड़ा पहिननेवालों के साथ लड़ते-लड़ते वे मारे गये हैं?

उग्रदत्त इसी उधेड़बुन में था कि पासवाले पेड़ों की झुरमुट में कुछ आहट हुई। वह उस तरफ़ रेंगता-रेंगता गया। पेड़ों की तरफ़ उसने ध्यान से देखा। जो उसने वहाँ देखा, उसके कारण वह घबरा गया। वह भय के कारण काँपने लगा।

दो भेड़िये पेड़ों के पीछे खड़े होकर उसकी ओर देखते, जीभ लटकाये हुए खड़े थे। उग्रदत्त को ऐसा लगा, जैसे वे यह निर्णय न कर पा रहे थे कि मैं ज़िन्दा हूँ या मरा। अगर उनको मालूम हो गया कि मैं इतना निस्सहाय हूँ तो वे मुझ पर अवश्य हमला करेंगे।

क्या कर सकता हूँ! किसी न किसी को आकर मुझे बचाना होगा। शायद रुद्र और आरुद्र भी उसी हालत में होंगे, जिस हालत में मैं हूँ।" उग्रदत्त ने निराश होकर सोचा।

आकाश में पन्द्रह मिनट तक दोनों गुटों का युद्ध होता रहा। फिर उग्रदत्त ने देखा कि कुछ पक्षी पश्चिम की ओर भागे जा रहे थे और कुछ उनको पीछे से खदेड़ रहे थे। पर वह यह न जान सका कि युद्ध मे कौन जीता था और कौन हारा था।

उग्रदत्त अपनी सारी शक्ति बटोर कर कोहनियों के बल, ज़मीन से कुछ ऊपर उठा और ज़ोर से चिल्लाया। उसका चिल्लाना सुन भेड़िये भाग गये। फ़िलहाल तो आफ़त टली, यह सोच उसने लम्बी साँस ली।

सूर्य धीमे-धीमे पश्चिम की ओर पहाड़ों के पीछे चला गया। जिस जगह उग्रदत्त था, वहाँ कुछ-कुछ ठंड होने लगी। प्यास के साथ उसे अब भूख भी सताने लगी। उसे ऐसा लगा जैसे उस पर कोई नशा-सा चढ़ रहा हो। उग्रदत्त ने सोचा यदि मैं नशे की बेहोशी में रहा, तो भेड़िये अवश्य आकर मुझे खा जायेंगे। परन्तु वह जगा भी न रह सका। वह गाढ़ निद्रा में फंस गया।

उग्रदत्त हड़बड़ाता उठा। उसे लगा मानों उसके चेहरे को बड़े-बड़े नाखूनों से कोई नोंच रहा हो। फिर उसको दूरी पर शोर सुनाई दिया। उग्रदत्त भी अनायास चिल्ला उठा। उसने देखा कि अन्धेरे में उसको पार करके कोई काली चीज़ पेड़ों में भागी जा रही थी, वह भालू था।

उग्रदत्त हैरान था। किसी का चिल्लाना सुन डरकर, उसको बिना कुछ किये, भालू

भाग गया था। शोर करनेवाले कौन थे! मैं कहाँ हूँ!

"आओ, इधर आओ, यहाँ पेड़ों के झुरमुट में पड़ा हुआ है। भालू भाग गया है।" कहता एक व्यक्ति उग्रदत्त की ओर भागा भागा आया। उसके हाथ में एक बड़ा भाला था। उसने भालू का चमड़ा पहिन रखा था।

भालू का चमड़ा पहिननेवाला उसकी ओर आ रहा था कि उग्रदत्त ने सिर उठाकर कहा—"इन रस्सियों को खोलो। प्यास बुझाने के लिए अगर पानी वगैरह कुछ हो

तो दो।" उमदत्त की आवाज़ यह कहते कहते रुंध गई।

भालू के चमड़े पहिननेवाले ने कुछ न कहा और रस्सियाँ खोलने लगा। इतने में भालू का चमड़ा पहिननेवाले दो आदमी वहाँ आये। उनमें से एक के कन्धे पर धिया लटक रही थी। उमदत्त ने दूसरी ओर संकेत करके कहा कि उसको प्यास लग रही थी। भालू का चमड़ा पहिननेवाले ने धिये का डाट हटाया और धिये को उमदत्त के मुख पर लगाया। उमदत्त गटागट पानी पी गया और फिर सिर हिलाने लगे, ताकि वह समझ जाय कि उसे और पानी नहीं चाहिए था। प्यास बुझ जाने के बाद उमदत्त को लगा, जैसे जान में जान आ गई हो। इतने में उसके हाथ और पैरों पर बँधी रस्सियाँ भी खोल दी गईं। उमदत्त ने पैर और हाथ झाड़कर देखे। उनमें फिर रक्त संचार होने लगा। जैसे वह चाहता, वैसे वह उन्हें घुमाने लगा।

"क्या, उठकर चल सकते हो?" एक भालू का चमड़ा पहिननेवाले ने पूछा।

"तुम शत्रु हो या मित्र?" उमदत्त ने पूछा।

"यह बात हमारे सरदार के सामने उनके सवालों के और तुम्हारे जवाबों पर निर्भर होगा।" भालू का चमड़ा पहिननेवाले ने कहा।

"अच्छा, तो चलो।" उमदत्त उठकर खड़ा हो गया। तीन भालू का चमड़ा पहिननेवाले उसको अपने साथ ले गये। पेड़ों के झुरमुट में कुछ दूर जाने के बाद ऊँचे नीचे पत्थरों के बीच में उन्होंने एक पत्थर उठाया—अन्दर गये। और फिर पत्थर को पहिले की तरह रख दिया।

(अभी है)

सीता वनवास

रावण को मारकर, राम सीता के साथ अयोध्या वापिस आया और प्रजा का परिपालन करने लगा। इतने में राम की बहिन, शान्ता के पति ऋष्यश्रृंग महामुनि ने एक यज्ञ करने का निश्चय किया। उसमें उपस्थित होने के लिए वशिष्ठ, उनकी पत्नी, अरुन्धती, कौशल्या, कैकेयी और सुमित्रा आदि गयीं। सीता गर्भिणी थी। इसलिए वह न गयी। उसके लिए राम भी अयोध्या में ही रह गया।

अर्जुन नाम के चित्रकार ने राम के जीवन को, यानि सीता के अग्नि-प्रवेश तक, चित्रित किया था। चित्र देख सीता आनन्दित होगी, यह सोच लक्ष्मण उन्हें ले आया।

उन चित्रों को देखकर सीता को फिर गंगा में स्नान करने की, गंगा के आस पास के जंगलों में घूमने की इच्छा हुई। उसने यह राम से कहा। क्योंकि वह गर्भिणी थी, इसलिए लोगों ने राम से कहा था कि उसकी हर इच्छा पूरी की जाये। राम उसकी बात मान गया और उसने लक्ष्मण को रथ तैयार करने के लिए कहा। लक्ष्मण चला गया। और सीता राम की गोद में सिर रखकर सो गई।

इतने में दुर्मुख नामक एक व्यक्ति राम के दर्शन करने आया। इस दुर्मुख का काम था कि वह सुने कि राम के राज्य में लोग क्या कह रहे थे और राम को वह सब बताये।

पहिले तो दुर्मुख ने राम के बारे में जो अच्छी बातें कही जा रही थीं, वही बताईं। जब राम के कहने पर कि बुरी बातें भी बताई जायें तो उसने कहा—"प्रभु! कई का कहना है कि सीता को, जो पराये के घर रहकर आई है, महा पतिव्रता स्त्री के रूप में स्वीकार करना अनुचित है।"

राम का हृदय थम-सा गया। सीता की अग्नि-परीक्षा करके ही तो उसने उसको स्वीकार किया था। फिर भी ईक्ष्वाकु राजाओं ने प्रजा की बात मानी है। उसको भी, जो उनके पदचिन्हों पर चल रहा था, सीता को छोड़ना ही पड़ेगा।

राम ने दुर्मुख से कहा—"तुम लक्ष्मण के पास जाकर कहो कि सीता को मैंने जंगल में छोड़ आने के लिए कहा है। उससे कहना कि यह राजा की आज्ञा है।" उसने सीता का सिर गोदी में से नीचे रखा और वहाँ से चला गया। सीता जब सोकर उठी तो उसको पता लगा कि रथ तैयार था। वह खुशी खुशी जाकर रथ में बैठकर गंगा की ओर निकल पड़ी। लक्ष्मण ने उसे गंगा के तट पर वाल्मीकी आश्रम के पास के बन में छोड़ दिया। उसको राम का निर्णय बताया। उसके चले जाने के बाद सीता दुखी हो गंगा में कूद पड़ी।

वहाँ उसने दो जुड़वे बच्चों को जन्म दिया। तब गंगादेवी, भूदेवी आकर सीता को पाताल लोक में ले गईं और वहाँ सीता

को सुरक्षित रखा। जब बच्चों को माँ के दूध की आवश्यकता न रही, तब गंगादेवी उन दोनों बच्चों को ले जाकर वाल्मीकी मुनि को सौंप आई। वे दोनों कुश और लव के नाम से महामुनि के आश्रम में बड़े होते रहे, वहाँ उन्होंने सब विद्यायें सीखीं।

बारह वर्ष बीत गये। इस बीच राम ने पत्नी सीता की एक सुवर्ण प्रतिमा बनाकर, अश्वमेघ यज्ञ करने की सोची। इसके लिए एक अश्व को देशों में घुमाया जाता है। उसके पीछे कुछ योद्धा होते हैं, जो कोई उसे पकड़ता है, उसे हराते हैं। राम के भेजे हुए घोड़े की रक्षा के लिए लक्ष्मण का लड़का चन्द्रकेतु सेना के साथ निकल पड़ा।

उसी समय ऋष्यशृंग का यज्ञ समाप्त हुआ। वशिष्ठ, अरुन्धती, कौशल्या आदि को जब सीता के वनवास के बारे में मालूम हुआ तो उन्होंने निश्चय किया कि सीता की अनुपस्थिति में वे अयोध्या न जायेंगे और वाल्मीकी के आश्रम में रहेंगे। वे वहाँ गये। सीता का पिता जनक भी वहीं आया। इसी समय एक दिन दुपहर को वाल्मीकी

कोई अन्याय हुआ है! नहीं तो मेरे पुत्र की अकाल मृत्यु क्यों हुई?" वह यह कह छाती पीटने लगा। राम को यह सुन बड़ा दुख हुआ। उसको मालूम हुआ कि शम्बूक नाम का शूद्र कहीं तपस्या कर रहा था, इसी लिए ही ऐसा हुआ था। उस शम्बूक को खोजने के लिए राम विमान में निकल पड़ा। शम्बूक जनस्थान में तपस्या कर रहा था। राम शम्बूक को मारने के लिए पास ही अगस्त्य आश्रम में पहुँचा। गंगादेवी ने सोचा कि उसके लिए सीता को देखने का यह अच्छा अवसर था। उसने सीता को अदृश्य बनाकर तमसा के साथ वहाँ भेज दिया।

तमसा नदी में स्नान करने गया। वहाँ उसने देखा कि एक शिकारी ने क्रौन्च पक्षियों के जोड़े में से एक को मार दिया है। यह देख तुरत उनके मुख से अनायास कविता निकल पड़ी। तब वाल्मीकी को ब्रह्मा प्रत्यक्ष हुए। उन्होंने उसको राम की कहानी को अन्य रूप में रचने की सलाह दी। उसके बाद वाल्मीकी रामायण की रचना में निमग्न हो गया।

इतने में एक ब्राह्मण ने अपने मृत बालक को कन्धे पर लादकर अयोध्या के राजद्वार पर आकर कहा—"राज्य में

एक दिन प्रातःकाल सीता स्नान करके सूर्य की पूजा के लिए फूल तोड़ रही थी कि उसके छोटे पालतू हाथी पर एक मत्त हाथी ने हमला किया। "आर्यपुत्र! मेरे हाथी की रक्षा कीजिये।" सीता अनायास चिल्ला उठी। तुरत उसे पंचवटी की घटनायें याद हो आईं और वह मूर्छित हो गई। तमसा ने उसकी सेवा शुश्रुषा की।

उस समय राम उस तरफ़ आया। जब उसको वह जगह याद हो आई जहाँ

और सीता घूमे थे, तो राम मूर्छित हो उठा। तब तमसा की प्रेरणा पर सीता ने राम को छुआ, तो राम को होश आ गया। राम ने सोचा तो कि सीता के कारण ही वह होश में आया था, चूँकि वह अदृश्य थी, इसलिए सीता उसको दिखाई नहीं दी।

इतने में वासन्ती नाम की एक बनदेवी ने राम की सहायता के बगैर ही सीता के मत्त हाथी को बचाया और मत्त हाथी को हरा कर भगा दिया। फिर वासन्ती ने राम को खूब सताया कि उसने क्यों सीता को जंगलों में भेज दिया था। राम ने कहा ताकि लोग बुरा न कहें। यह सोचकर कि सीता को जंगल में हिंस्र जन्तुओं ने कभी का मार दिया होगा, वह रोया बिलखा। सीता उसका कष्ट न देख सकी।

राम का दुःख हटाने के लिए वासन्ती ने वहाँ के प्रदेश को और अच्छी तरह दिखाया। राम को पुरानी बातें याद हो आई और वह फिर मूर्छित हो गया। सीता उसका स्पर्ष करके फिर उसको होश में लाई। चूँकि वह अपना हाथ तुरत हटा न पाई थी, इसलिए राम ने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा—"सीता, अब

मुझ को मिल गई है।" वासन्ती ने चारों ओर देखकर कहा—"यहाँ तो कोई भी नहीं है।" इतने में सीता ने अपना हाथ खींच लिया। राम ने सोचा कि उसने कोई सपना देखा होगा।

और उधर वाल्मीकी महामुनि के आश्रम में यज्ञ के लिए भेजा गया अश्व पहुँचा। आश्रम के बच्चों ने उसे घेर लिया। उन्होंने घोड़े के बारे में सुना तो था, पर अभी तक उसको देखा न था। घोड़े के माथे पर एक सूचना टंगी थी, "यह महाशूर राम का घोड़ा है। अगर कोई शूर है, तो

इसे पकड़ ले।" यह पढ़कर महाशूर लव ने उसको पकड़ लिया।

इतने में सैनिकों ने आकर कहा—"यदि चन्द्रकेतु आयेगा, तो तुम्हें मार देगा। यह राम का घोड़ा है। राम रावण को मारनेवाला, संसार का सबसे बड़ा वीर है।" उन्होंने लव को डराया।

लव ने जवाब में कहा—"क्या संसार में राम के सिवाय कोई वीर ही नहीं है!" कहते हुए उसने धनुष पर बाण चढ़ाया और सैनिकों को तितर-बितर कर दिया। चन्द्रकेतु ने आकर भागते हुए सैनिकों का रोका। उसने लव को युद्ध के लिए ललकारा। लव ने देखा कि सब सैनिक उसको घेर रहे थे। उसने जृम्भिकास्त्र छोड़ा। जो जहाँ था, वह वहीं स्तब्ध खड़ा रह गया। चन्द्रकेतु को आश्चर्य हुआ, जिस अस्त्र के बारे में केवल राम ही जानता था, कैसे आश्रम के लड़के को मालूम हो सका।

फिर चन्द्रकेतु और लव में युद्ध हुआ। वे एक दूसरे के अस्त्रों को ध्वंस करने लगे। राम विमान में उन दोनों के बीच उतरा।

तब तक लव में, राम के प्रति कोई गौरव न था, पर जब उसने उसको अपनी आँखों देखा, तो जाने कहाँ से उसमें गौरव फूट पड़ा। राम के कहने पर उसने जृम्भिकास्त्र का उपसंहार किया। उसने उसको यह भी बताया कि उसको और उसके बड़े भाई कुश को इस अस्त्र का ज्ञान जन्म से ही था। तब कुश भी वहाँ आ पहुँचा। वह उन लोगों की रक्षा के लिए गया हुआ था, जो बाल्मीकी रामायण को भरतमुनि के पास ले जा रहे थे। भरतमुनि ने उस रामायण को, अप्सराओं से अभिनय कराने का निश्चय किया था।

फिर कुश और लव ने राम की इच्छा पर रामायण का एक अंश पढ़कर सुनाया। राम गुज़री हुई बातों को याद करके बड़ा दुःखी हुआ।

बाल्मीकी ने गंगा तट पर राम के लिए एक नाटकशाला बनवाई और वहाँ उसने उत्तर रामायण के नाटक के अभिनय की व्यवस्था की। उस नाटक द्वारा राम जान गया कि कैसे सीता ने जुड़वें बच्चों को

जन्म दिया था, भूदेवी और गंगादेवी ने उसको पाताल लोक पहुँचाया था। सीता का जृम्भिकास्त्र लव और कुश को देना, फिर लव और कुश का वाल्मीकी आश्रम में पालन-पोषण—आदि,—। नाटक देखते देखते राम मूर्छित हो गया।

इतने में गंगा में से गंगादेवी और भूदेवी, सीता को लेकर निकलीं। सीता को उन्होंने अरुन्धती देवी को सौंप दिया। राम अभी मूर्छित था। अरुन्धती की अनुमति पर सीता ने उसको छुआ। राम होश में आया। सीता और अरुन्धती को देखकर वह लज्जित हुआ।

जहाँ यह नाटक हुआ था, वहाँ जनक, वशिष्ट, कौशल्या आदि, लक्ष्मण और चारों वर्णों के नागरिक उपस्थित थे। अरुन्धती ने उन सबको सम्बोधित करके कहा—"महाशयो! पहिले ही अग्निदेवता बता चुके हैं कि सीता महापतिव्रता है। अब भूदेवी और गंगादेवी भी यही कह रही हैं। क्या सीता स्वीकार योग्य है? आप लोगों का क्या कहना है?" "स्वीकार योग्य है।" सबने ज़ोर से कहा।

"तुम अब अपनी पत्नी सीता को स्वीकार करो।" अरुन्धती ने राम से कहा।

लक्ष्मण ने सीता को नमस्कार किया।

वाल्मीकी, कुश और लव को वहाँ लाया। उसने उनका सीता, राम, लक्ष्मण, जनक आदि से परिचय कराते हुए कहा—"ये तुम्हारे माता-पिता हैं। ये तुम्हारे चाचा हैं और ये तुम्हारे नाना हैं।" उस समय लवणासुर का विजेता शत्रुघ्न भी वहाँ आया। यह एक और सन्तोष की बात थी।

इसके बाद राम, अपनी पत्नी और बच्चों के साथ अयोध्या वापिस आया और सुखपूर्वक राज्य करने लगा।

असफल उपाय

एक नगर में एक धनी रहा करता था। दान आदि देने के कारण वह दानी के रूप में भी प्रसिद्ध था। पास के ही नगर में एक और धनी था। लेकिन वह बड़ा लोभी था। जो लोग दानी की प्रशंसा करते, इस लालची कंजूस को दुत्कारते भी।

कंजूस ने जैसे भी हो, अपनी बदनामी दूर करनी चाही। उसके पास एक विश्वासपात्र नौकर था। उसने उससे सलाह मशवरा किया और उससे कोई उपाय सोच निकालने के लिए कहा।

"लोगों से आप अपने को दानी नहीं कहलवा सकते। परन्तु पास के शहर के दानी धनी को आसानी से ठगा जा सकता है। उसको एक दिन अपने यहाँ न्योता दीजिये। जब वे हमारे घर में होंगे तो मैं वेष बदल बदलकर माँगने आऊँगा। जब वे देख रहे हों, तब आप मुझे हर बार सौ सौ मोती दीजिये। वे चकित हो उठेंगे और जो कोई मिलेगा उससे आपकी दान शीलता की प्रशंसा करते रहेंगे। बिना एक पैसा खर्च किये आपको भी बड़ी ख्याति मिलेगी।" नौकर ने कंजूस को सलाह दी।

"हाँ, तुम्हारा उपाय बहुत अच्छा है। कल ही उन्हें भोजन पर बुलाया जाय। तुम शाम को उनके शहर जाओ, जैसे उसको निमन्त्रित करना हो, वैसे करके आओ। कल सवेरे ही उन्हें अपने घर बुला लाना।" कंजूस ने कहा।

नौकर दानी के नगर गया। उसने उनसे कहा—"हमारे मालिक ने अपने घर आपको न्योता दिया है। आप कृपया उनका आतिथ्य स्वीकार कीजिये।"

"तुम्हारे मालिक तो बिल्ली के लिए भी कुछ नहीं छोड़ते, फिर वे मुझे कल क्यों बुला रहे हैं! क्या बात है?" दानी ने कंजूस के नौकर से पूछा।

"हुज़ूर! जो लोग मेरे मालिक के बारे में कहते हैं, लगता है, आपने भी विश्वास कर लिया है। सच तो यह है कि वे बड़े उदार और दानी हैं। वे मामूली भिखारी को भी सौ मोतियों से कम नहीं देते। वे गुप्त दान ही करते हैं! किसी तीसरे आदमी को नहीं मालूम होने देते। और क्या कहूँ! कल आप स्वयं देख लेंगे। अब यह बताऊँ कि उन्होंने आपको क्यों बुलाया है! अब तक उन्होंने लाख मोतियाँ दान में दे दी हैं। इसलिए वे मन्दिर में कल अभिषेक करवा रहे हैं। इस अवसर पर उन्होंने एक योग्य व्यक्ति को घर में आतिथ्य देने का निश्चय किया है। क्योंकि इस ईलाके में आप ही उनके बराबर दानी हैं, इसलिए आपको न्यौता भेजा है।" कंजूस के नौकर ने कहा।

दानी ने थोड़ी देर सोचकर कहा—"अच्छा, तो अपने मालिक से कहना कि मैं कल सवेरे आ जाऊँगा।" नौकर, कंजूस के घर वापिस गया। जो कुछ उसने दानी से कहा था, उसको बताया। वह नौकर की सूझबूझ पर बड़ा सन्तुष्ट हुआ।

अगले दिन दानी, कंजूस के घर गया।

"आप आये, और साथ कोई नौकर भी न लाये।" कंजूस ने कहा।

"नौकर को कुछ काम था, इसलिए वह पीछे रह गया। काम होते ही वह भी आ जायेगा।" दानी ने कहा।

"देखा! सुनता हूँ कि मेरे नौकर ने आपको बता दिया है कि मैं लाख मोती

अब तक दान में दे चुका हूँ। मैं बिल्कुल नहीं चाहता कि मेरे दान के बारे में किसी को कुछ मालूम हो। दान-धर्म करना मेरे लिए मुख्य है। ख्याति-कीर्ति पाना मुख्य नहीं है। इसलिए मेरा भेद किसी को कभी न बताइये।" कंजूस ने कहा।

कंजूस के नौकर ने कहा—"हुज़ूर, मैं मन्दिर जाकर अभिषेक आदि करवाकर आता हूँ।" कहकर वह घर चला गया।

कंजूस ने, जो दानी से उस समय बातें कर रहा था, अपने पास रखी थैली में से सौ मोती निकालकर उसे दे दिये।

बूढ़े भिखारी के चले जाने के बाद एक बैरागी आया। उसे भी उसने सौ मोती देकर भेज दिया।

तब से भोजन के समय तक एक गूँगा, एक अन्धा, एक बंजारा, एक यात्री, एक मदारी—इस तरह दस आदमी आये। कंजूस ने इन सबको, तो सौ-सौ मोतियाँ दीं ही और अपने नौकर की चतुराई की भी मन ही मन प्रशंसा की कि उसने किस अच्छे ढंग से इतने सारे वेष बदले थे।

दानी ने कंजूस से कहा—"मैंने आप जैसा दानी कहीं नहीं देखा है, न कहीं

सुना ही है। आज ही आपने दस हज़ार मोतियाँ दान में दे दीं।"

"नहीं, दस आदमी आये, दस बार मैंने सौ-सौ मोती दे दिये। यह तो मेरे लिए प्रथा-सी हो गई है।" कंजूस ने उपाय की सफलता के बारे में प्रसन्न होते हुए कहा।

दुपहर को कंजूस का नौकर अपने मामूली वेष में आया। उसने अपने मालिक से कहा—"अभी ही पूजा समाप्त हुई है। ये लीजिए प्रसाद लाया हूँ।" कहकर वह थाल के साथ घर के अन्दर गया।

थोड़ी देर में कंजूस भी अन्दर गया, उसने नौकर से कहा—"नाटक, तो तुमने खूब खेला, कहाँ है हमारा धन?"

"यह लीजिये, यह रखा है। पाँच सौ—" कहकर नौकर ने कंजूस को थैली दे दी।

"अरे, पाँच सौ क्या! मैंने तो तुम्हें हज़ार मोती दिये थे।" कंजूस ने कहा।

"जी नहीं, मैं पाँच बार ही आया था। जब जब आया, आपने मुझे सौ सौ मोतियाँ दीं।

"आने को तो दस आये थे। अगर तुम पाँच बार आये थे, तो पाँच बार और कौन आया था?" कंजूस ने फ़िक्र में ज़ोर से पूछा।

"शायद वह हमारा नौकर होगा।" दानी की आवाज़ सुनाई दी। जब मालिक और नौकर अन्दर बातचीत कर रहे थे, तो उसने धीमे से अन्दर आकर उसकी बातचीत सुनी।

"हमारा नौकर भी आया जाता है, आपकी दी हुई मोतियाँ कहीं न जायेंगी। वह भी विश्वासपात्र है।" दानी ने कहा।

कंजूस आश्चर्य और अपमान से दह-सा गया। उसकी चाल न चली।

भेड़िये का उपवास

एक जंगल में एक भेड़िया अकेला रहा करता था। भेड़िये अगर झुन्ड बनाकर शिकार करें तो शिकार मिल जाता है और अगर उसको अकेला शिकार करना पड़ जाये, तो पेट आसानी से भरता नहीं। इसलिए इस भेड़िये को प्रायः उपवास करना पड़ता।

जब वह यों भूखा मर रहा था, तो उसको एक दिन एक सपना आया। स्वप्न में उसने तरह तरह के पशुओं को खाकर, खूब पेट भरा था।

सोकर जब वह उठा तो खुशी खुशी यह सोचता शिकार के लिए निकल पड़ा। "आज मुझे अच्छा भोजन मिलेगा।"

वह अभी थोड़ी दूर गया था कि उसको कुछ दूरी पर एक बकरी और दो मेमने दिखाई दिये। भेड़िया कूदता कूदता बकरी के पास गया। उसने कहा—"आज से तेरा और तेरे मेमनों का रिश्ता खतम समझ। मुझे बड़ी भूख लग रही है। पहिले तेरे बच्चों को खाकर फिर तुझे खाऊँगा।"

बकरी ने इधर उधर देखकर कहा—"अगर तुम मुझे खाना ही चाहो तो क्या मैं तुम्हें रोक सकती हूँ। मरने से पहिले मैं बच्चों के साथ भगवान की प्रार्थना करना चाहती हूँ। ज़रा तुम इसके लिए मान जाओ।"

तब बकरी और मेमने ज़ोर से चिल्लाये मैं मैं करके। यह चिल्लाना गड़रिये के शिकारी कुत्ते को सुनाई दिया। वह भयंकर कुत्ता ज़ोर से भौंकता-भौंकता आया। बकरियों, के पास उस शिकारी कुत्ते को देखकर, भेड़िये के ऊपर के प्राण ऊपर रह गये और नीचे के नीचे। वह जंगल में भाग गया।

थोड़ी दूर जाने के बाद भेड़िये ने सोचा—"कितना ही अच्छा भोजन मेरे मुख तक आया और मैं अपनी ही गलती से उसको खो बैठा।"

कुछ और दूर गया तो उसको मोटा ताज़ा मुरगा दिखाई दिया—"मैं तुम्हें खाकर रहूँगा। खाना खाये बहुत दिन हो गये हैं। बहुत भूख लग रही है।" भेड़िये ने मुरगे से कहा।

"ओह, ऐसी बात है! तो मुझे खाकर अपनी भूख मिटा लो। परन्तु मुझे एक बार चिल्लाने दो।"

"नहीं वह सब नहीं करने दूँगा। शायद तुम कोई बहाना करके भाग जाना चाहते हो।" भेड़िये ने कहा।

"अरे पगले, मैं कहाँ जाऊँगा। अगर तुम्हें विश्वास न हो, तो मेरी पूँछ को अपने मुख में जोर से पकड़ लो।" मुरगे ने कहा।

"हाँ, यह बात तो कुछ बनी।" कहते हुए भेड़िये ने मुरगे की पूँछ के पंखों को मुख में जोर से पकड़ लिया। मुरगा तब जोर से कुकुर कुकुर कू चिल्लाया। जब वह यों चिल्लाया तो उसकी पूँछ का एक पंख भेड़िये के गले के अन्दर जा अटका। भेड़िया खाँसा। खाँसी खतम न हुई थी कि पासवाले पेड़ पर मुरगा जा बैठा।

"मेरी अक्ल मारी गई है, लगता है। सब मेरी आँखों में धूल झोंक रहे हैं। लगता है आज भी मुझे खाना नहीं मिलेगा।" सोचता सोचता भेड़िया आगे बढ़ गया। वह कुछ दूर गया था कि उसको एक घोड़ी और उसकी बछी कहीं जाते दिखाई दिये।

"आह, तुझे और तेरी बछी को खाकर अपनी भूख मिटाऊँगा।" भेड़िये ने घोड़े से कहा।

"मुझे और मेरी बच्ची को खाओगे! हमें खाने के लिए तुझे किसने अनुमति दी है! क्या तुम नहीं जानते कि मेरे पास यह आज्ञापत्र है कि जो कोई हमें खायेगा उसे चीर फाड़कर फेंक दिया जायेगा।" घोड़ी ने कहा।

भेड़िये ने चकित होकर पूछा—"आज्ञा! किसकी! क्यों! ज़रा मुझे देखने तो दो।"

"मेरे खुरों के नीचे हैं, देख लो।" घोड़े ने अगले पैरों में से एक को उठाकर दिखाया। भेड़िया जब उसके पैर के नीचे देखने गया और जब देखकर उसने सिर उठाया तो घोड़े ने उसके मुँह पर जोर से लात मारी।

उस चोट से भेड़िया बेहोश हो गया। जब उसे होश आया, न तो कहीं घोड़ी थी, न उसकी बच्ची ही।

"सचमुच मुझसे अधिक बौड़म जानवर का होना असम्भव है। इतनी बार ठगा गया, पर तब भी मुझे अक़्ल न आई।" सोचता-सोचता भेड़िया आगे बढ़ा।

थोड़ी देर बाद उसे मेंढ़ा दिखाई दिया। "देखो, मेंढ़े, मालूम है, तुम्हें मैं कैसे
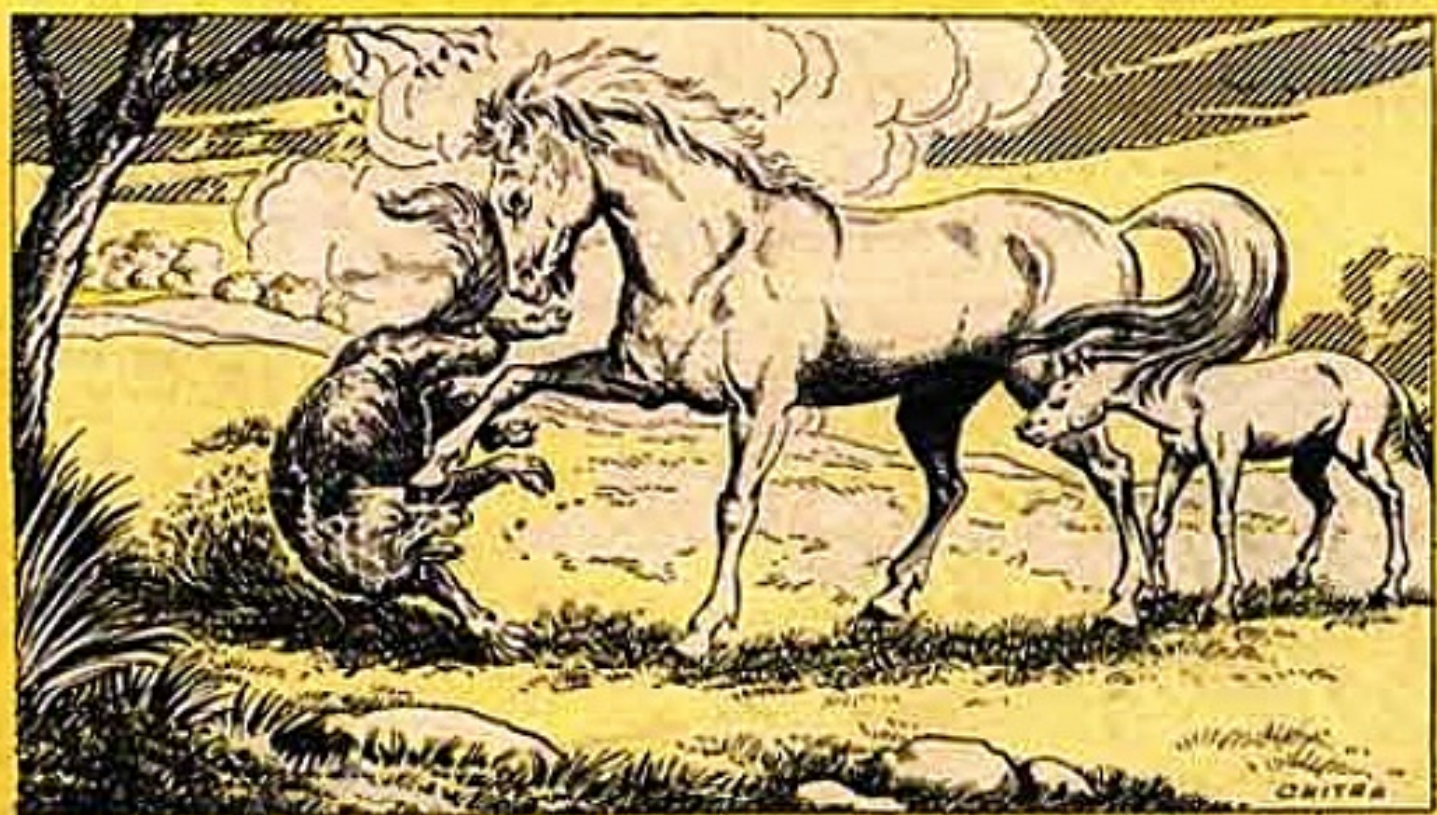
खाऊँगा! बाल, खाल, सींग सब खा जाऊँगा। मुझे उतनी भूख लग रही है।"

"खा लो, मुझे तुम खाओ या कोई और सब बराबर है। मैं तो पैदा ही दूसरों के खाने के लिए हुआ हूँ। क्योंकि तुम भूखे हो और बालों के साथ मुझे खाने के लिए तैयार हो, इसलिए मैं तुम्हारा काम कर दूँगा। तुम मुख खोलकर खड़े हो जाओ। मैं भागा-भागा, तुम्हारे मुख में आ कूदूँगा।" मेंढ़े ने कहा।

भेड़िया खुशी-खुशी मुख खोल कर खड़ा हो गया। मेंढ़े ने सिर नीचा किया। सींग आगे करके, कुछ दूरी से बहुत तेज़ भागा-भागा आया और भेड़िये के पेट में सींग भोंककर उसी तेज़ी से कहीं भाग गया।

मेंढ़े की चोट से भेड़िया कुछ दूर जा गिरा, लहूलुहान हो गया। थोड़ी देर बाद बदन झाड़कर खड़ा हो गया।

"आज हो न हो, मेरे मुख में शनि है। इस सपने पर मैंने विश्वास किया और सोचा कि आज अवश्य खाना मिलेगा। खाना तो मिला, पर उसको पाने की अक्ल हो न मुझ में तब न! मुझ जैसे मूर्ख की पूँछ काटकर कोई मार भी दे, तो कोई पाप नहीं है।" उसने सोचा।

वह, यह जब सोच रहा था, तो एक बड़े पेड़ के पास था। उस पेड़ के पीछे एक शिकारी छुपा खड़ा था। वह भेड़िया की पूँछ पकड़ सकता था। उसने अपने गंड़ासे से उस पर चोट की। उस चोट से भेड़िये की पूँछ जाती रही।

"अच्छा, तो कम से कम इसी तरह मेरी एक इच्छा तो पूरी हुई।" सोचता सोचता भेड़िया वहाँ से भाग गया।

तीन प्रवीण

विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा। वह फिर पेड़ के पास गया। पेड़ पर से शव उतार कर, कन्धे पर डालकर चुपचाप श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा, मैं ही थक गया हूँ, पर तुम थकते मालूम नहीं होते। फिर भी तुम्हें थकान न मालूम हो, यह सोच मैं एक कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यों कहानी सुनानी शुरू की।

अंगदेश में वृक्षपुट नाम का ब्राह्मणों का एक ग्राम था। उसमें विष्णुस्वामी नाम का एक ब्राह्मण था, वह धनी था। उसने कई यज्ञ भी कर रखे थे। उसके तीन लड़के थे, जिनमें विचित्र शक्तियाँ थीं।

बड़ा लड़का, भोजन में यदि छोटी-सी छोटी भी कोई कमी रह जाती, तो वह मालूम कर लेता और दूसरे में यह शक्ति थी कि यदि किसी स्त्री में कोई दोष होता

तो वह जान जाता। तीसरा यदि बिछौने में कुछ होता तो सो नहीं पाता था।

एक बार विष्णुस्वामी ने एक यज्ञ करने की ठानी। उस यज्ञ के लिए समुद्री कछुवे की आवश्यकता पड़ी। उसे लाने के लिए उसने अपने लड़कों को आज्ञा दी। वे समुद्र गये, वहाँ से एक कछुआ पकड़कर घर ले जाना था। बड़े भाई ने छोटे भाइयों से कहा—"तुम में से कोई इसे घर ले जाओ। मैं इस कछुवे को नहीं छुऊँगा।"

"जब इस कछुवे को घर ले जाने का भार पिताजी ने हम तीनों को सौंपा है, तो तुम कैसे न कर सकते हो!" हमारे साथ इसको कुछ दूर ढोने में क्या आपत्ति है!" छोटे भाइयों ने बड़े भाई से पूछा।

"मेरी शक्ति तो तुम जानते ही हो! इस गन्दी बदबूवाले भारी कछुवे को मैंने छुआ, तो फिर इस जन्म में भोजन नहीं कर पाऊँगा।" बड़े भाई ने कहा।

यह सुन दूसरे भाई ने कहा—"जितनी शक्ति तुम में है, उतनी मुझ में भी है। अगर किसी स्त्री में रत्ती भर भी दोष हो, तो मैं उसे जान जाता हूँ। मैं भला क्यों कछुवे को उठाऊँ!"

भाई, कछुवे की बात भूलकर, आपस में काफ़ी देर तक झगड़ते रहे, हर कोई कहता मेरी शक्ति तुम से बड़ी है। आखिर वे कछुवे को वहीं छोड़कर अपनी शक्तियों के बारे में फैसला करवाने के लिए समीपवर्ती विटंकपुर के राजा, प्रसेनजित के पास गये। राजा ने उन्हें अन्दर बुलाकर पूछा कि वे किस काम पर आये थे।

"अच्छे से अच्छे भोजन में यदि कोई नुक्स हो, तो मैं उसे बता सकता हूँ।" बड़े ने कहा।

"किसी भी स्त्री में यदि कोई दोष हो, तो मैं जान सकता हूँ।" दूसरे ने कहा।

"बढ़िया से बढ़िया गद्दा हो, उस में क्या दोष है, मैं बता सकता हूँ।" तीसरे भाई ने कहा। "हम सब की शक्तियों में किसकी शक्ति सब से अधिक बड़ी है, आप तय कीजिये।" तीनों भाइयों ने कहा।

उनकी बातें सुनकर राजा को आश्चर्य हुआ। उसने सोचा कि इससे पहिले कि कोई फैसला किया जाय, यह जरूरी है कि इनकी शक्तियों को आजमाया जाये। उसने उनको अपने साथ पंक्ति में भोजन के लिए बिठाया। राजोचित भोजन था। बढ़िया चावल

परोसे गये थे। सबने बड़े चाव से भोजन प्रारम्भ किया। परन्तु भाइयों में से बड़ा नाक बन्द किये घुट-सा रहा था। राजा ने उससे पूछा—"भोजन इतना स्वादिष्ट है और तुमने इसे छुआ तक नहीं है।"

"राजा, चावलों में ऐसी बू है जैसे शव के जलने से आती है। कैसे खाऊँ!" बड़े ने कहा।

राजा ने औरों से पूछा—"क्या तुमको कोई बदबू आ रही है।"

"हमें तो इस चावल में बड़ी अच्छी गन्ध आ रही है!"

फिर भी राजा ने जब पूछताछ करवाई, तो मालूम हुआ कि जो चावल उस दिन बने थे, वे श्मशान के पासवाले खेत में ही पैदा किये गये थे। यह सुन राजा चकित हुआ। बड़े भाई की शक्ति की उसने प्रशंसा की और उसके लिए अलग चावल बनवाये।

फिर दूसरे की सेवा करने के लिए उसने एक दासी को भिजवाया। वह दासी छुटपन से ही राजमहल में पाली गई थी। परन्तु उसके पास आते ही दूसरे भाई ने कहा—"छी, छी, दूर हटो, तुम्हारे पास
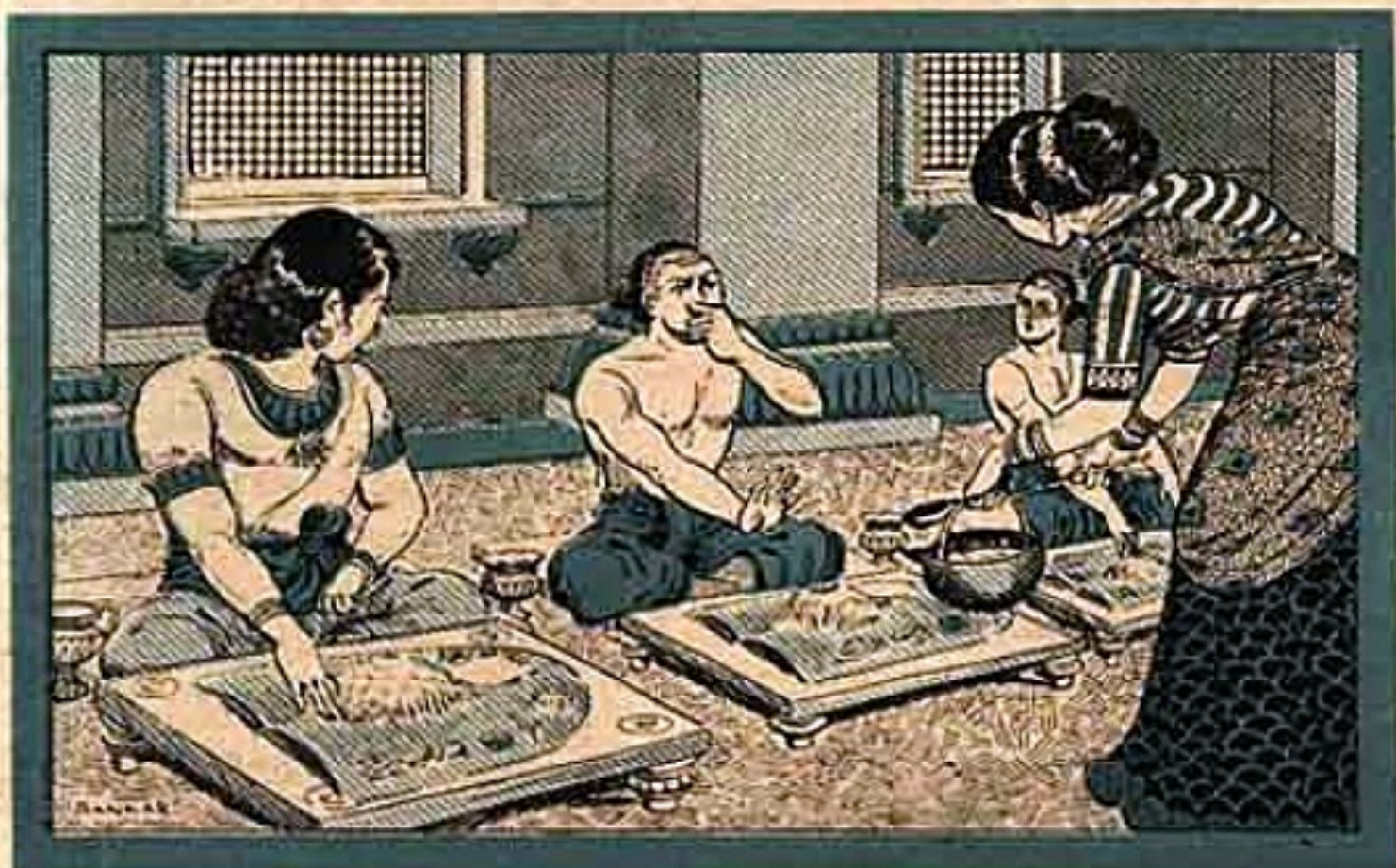
बकरियों की बू आ रही है।" यह सुन राजा को आश्चर्य हुआ। उसने दासी को बुलवाया। वह कुछ दूर ही खड़ी थी कि उसको चन्दन की गन्ध, कस्तूरी की गन्ध, और फूलों की सुगन्ध ही आयी।

क्योंकि दूसरे भाई ने बताया था कि उसके पास बकरियों की बू आ रही थी, इसलिए पूछताछ की गई। उस लड़की की माँ उसके प्रसव समय में ही गुज़र गई थी। उसको बकरी का दूध देकर पाला पोसा गया था। राजा ने चकित होकर दूसरे भाई की शक्ति की भी प्रशंसा की।

उस दिन रात को राजा ने छोटे भाई के लिए अच्छा-सा बिस्तर लगवाया। एक पलंग पर मुलायम मुलायम सात तोषकें बिछाई गयीं। उसके ऊपर दूध के झाग-सी सफ़ेद चादर बिछाकर तीसरे भाई के लिए बिस्तर तैयार किया गया। पर रात में एक बार वह चिल्लाता उठा—"दर्द दर्द।" नौकर भागे-भागे आये। उन्होंने पूछा—"क्या हुआ है?"

"इस तरफ़ कोई बाल है। वह मुझे चुभ रहा है। यह देखो उसका निशान।"

कहकर तीसरे ने अपने शरीर पर लाल लाल गोल गोल बाल का निशान दिखाया।

नौकरों ने राजा को बुलाया। राजा ने स्वयं सात तोषकें हटवाकर, बाल के लिए खोज की। सात तोषकों के नीचे एक बाल था और जब उसको तीसरे भाई के शरीर पर पड़े निशान से मिलाया गया, तो वह बाल ठीक निकला।

अगले दिन राजा के पास तीनों भाइयों ने आकर पूछा—"हम तीनों में किसकी शक्ति बड़ी है?" राजा इसका निर्णय न कर सका।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा—"राजा, उन तीनों भाइयों में विचित्र शक्तियाँ थीं—परन्तु सचमुच उनकी शक्तियों में किसकी शक्ति बड़ी थी? अगर इन प्रश्नों का तुमने जान-बूझकर उत्तर न दिया, तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा।"

विक्रमार्क ने कहा—"पहिले दोनों की शक्तियाँ सच हो सकती हैं और सच नहीं भी हो सकती हैं। उनके लिए कोई प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं है। श्मशान के पास पैदा किया गया धान और दासी का बकरी के दूध पर पाला जाना, केवल कल्पना ही हो सकती है। नहीं तो, यह भी सम्भव है कि वे पहिले ही किसी से मालूम कर लीगई हों। परन्तु तीसरे भाई की शक्ति के विषय में सन्देह की गुँजाइश नहीं है। क्योंकि सात तोषकों के नीचे पड़े बाल का निशान प्रत्यक्ष रूप से उसके शरीर पर था। इसलिए उसकी शक्ति ही बड़ी थी।"

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल अदृश्य हो गया और वृक्ष पर जा बैठा गया।

स्वर्ण हस्त

एक समय था, जब दक्षिण भारत के मदुरै नगर में एक पाण्ड्य राजा राज्य किया करता था। वह जनता को अपनी सन्तान की तरह देखता। किसी के प्रति कोई अन्याय न होने देता। उसका राज्य राम राज्य की तरह था।

यदि किसी को कोई कष्ट होता तो उसकी खबर गुप्तचरों द्वारा राजा तक पहुँचती। वह यथासाध्य उनके कष्टों का निवारण करता रहता।

यही नहीं, वह स्वयः गुप्त वेश धारण करके जनता का कुशल-क्षेम मालूम किया करता। इसलिए उसके राज्य में प्रजा बड़ी सुखी थी।

एक दिन रात को जब राजा वेश बदलकर नगर में घूम रहा था तो दस बजे के समय एक ब्राह्मण-गली में आया। जब वह एक घर के पास पहुँचा तो घर के अन्दर से किसी का विलपना और किसी पुरुष का उसको आश्वासन देना सुनाई पड़ा।

राजा उस घर के सामने खड़े होकर उनका सम्भाषण सुनने लगा। उस घर में एक ब्राह्मण परिवार रहा करता था। उनकी सन्तान न थी। अगले दिन ही ब्राह्मण किसी काम पर काशी जा रहा था। उसके वापिस आने तक अकेले बैठ रोना होगा, यह सोच उसकी पत्नी रो रही थी।

"छः महीने बाद अमावस्या के आते ही मैं वापिस जो आ जाऊँगा। छः महीने के लिए आवश्यक चीजें मैंने घर में रख ही दी हैं। तुम्हें दुखी नहीं होना चाहिए। ऐसी कोई बात नहीं है। तुम्हें कोई कष्ट न होगा।" पति ने कहा।

"मैं यह सोच नहीं रो रही कि खाने-पीने की चीज़ें कम हो जायेंगी। स्त्री हूँ, फिर अकेली। छः महीने यदि अकेले घर में रहना पड़ जाय तो सोचिये कितना कष्ट होगा। हमेशा डर लगा रहेगा, जाने कब कौन चोर घर के अन्दर घुसता है।

"अरे पगली, जब हर किसी के कष्ट निवारण करनेवाले हमारे राजा हैं, तब चोरों का क्या डर! वाह, कभी तुमने हमारे राज्य में चोरी डकैती के बारे में सुना! क्या तुम्हें यह भय है कि जो इतने बड़े राज्य की रक्षा कर रहा है, वह तुम्हें चोरों से नहीं बचा सकेगा! इस तरह का ऊँटपटाँग भय छोड़ो।" पति ने कहा।

यह सम्भाषण सुन राजा आगे चला गया। अगले दिन उस घर का मालिक काशी चला गया।

उस दिन रात को, राजा वेश बदलकर उस गली में आया और रात भर उसने उस घर के सामने पहरा दिया। उसके बाद वह रोज उस घर का पहरा देने आता।

रोज़ बीते, सप्ताह हुए, महीने गुज़र गये। छः महीने हो गये। अमावस्या भी आ गई। राजा अपनी आदत के अनुसार वेष बदलकर उस घर का पहरा देने गली में आया।

वह अभी घर के पास पहुँचा था कि किसी पुरुष की आवाज़ अन्दर से सुनाई दी। यह सन्देह करके मालिक की अनुपस्थिति में कोई परपुरुष घर में घुसा है, उसने किवाड़ खटखटाया। परन्तु उसने जब किवाड़ के छेद से देखा तो पाया कि घर का मालिक काशी से वापिस आ गया था और बैठा बैठा पत्नी से बातचीत कर रहा था।

राजा चकराया। उसका किवाड़ खटखटाना ठीक न लगा। उस ब्राह्मण को सन्देह हो सकता था कि जब वह काशी में था, तो कोई आकर उसका किवाड़ खटखटाता रहा होगा। इस गल्ती को ठीक करने के लिए उसने उस गली के कुछ घरों के किवाड़ खटखटाये और फिर अन्धेरे में कहीं चला गया।

किसने किवाड़ खटखटाये थे, यह देखने के लिए घरवाले बाहर आये। सबने

सोचा कि यह किसी चोर की करतूत थी। उस नगर में ऐसा कभी पहिले न हुआ था। इसलिए उन्होंने राजा से शिकायत करने का निश्चय किया।

अगले दिन वे सब राजा के दरबार में हाज़िर हुए। "महाराज, हम अब तक आपके राज्य में बिना चोर के भय या किसी और भय के, आपकी रक्षा में निर्भय और सुखी रहते आये हैं। परन्तु कल रात हमारे गली में एक घटना हुई। उससे हम सब बड़े चिन्तित हैं और आपके लिए भी शायद यह अपकीर्ति का विषय हो। कोई चोर रात को हमारे घरों के किवाड़ खटखटाकर भाग गया। उसको पकड़कर दण्ड दिया जाय, यह हमारा निवेदन है।"

तुरत राजा ने प्रधानमन्त्री की ओर मुड़कर पूछा—"जो ये अपराध बताते हैं, उसका क्या दण्ड है?"

नगरवासियों ने कहा कि जिसने यह भय पैदा किया है—उसका दायाँ हाथ कटवा देना चाहिए। यही इस अपराध का दण्ड है।" मन्त्री ने कहा।

तुरत राजा ने अपनी तलवार लेकर बायें हाथ से, दाया हाथ काट दिया। फिर उसने सब के समक्ष, जो कुछ गुज़रा था, कह सुनाया। यह सुन सब ने दुःखी होकर राजा के सद्-व्यवहार की खूब प्रशंसा की।

फिर उन्होंने एक सोने का हाथ बनवाकर, राजा की भुजा में लगा दिया। जब सबने जाकर सुन्दरेश्वर स्वामी के मन्दिर में पूजा की तो उसका हाथ फिर मामूली हो गया।

चमचमाते, उस सोने के हाथ के कारण वह राजा सुवर्ण हस्त पाण्ड्य राजा के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

अन्धी सरकार

किसी ज़माने में हैदराबाद शहर के पास शकुरा नाम का एक गरीब रहा करता था। वह नवाब के यहाँ छोटी-मोटी नौकरी करके, कम से कम दो तीन रुपये का वेतन लेकर अपना गुज़ारा करने हैदराबाद शहर आया। उन दिनों दो रुपये के वेतन पर ही अच्छा गुज़ारा हो जाता था।

शकुरा ने बहुत कोशिश की, लेकिन कोई फ़ायदा न हुआ। उसने बहुत-सी दर्ख्वास्तें भेजीं। चूँकि कोई मदद करनेवाला न था, इसलिए वे सब रद्दी की टोकरी में डाल दी गईं।

आखिर शकुरा ने हिम्मत करके एक काम किया। उसने सुनार की मदद से एक मुहर बनवाली। उसे लेकर वह बड़ी अदालत के बाहर बैठ गया। सामने एक मेज रख ली। जो कोई अन्दर अर्जी या दर्ख्वास्त देने जाता तो वह उस पर मुहर लगाता और उनसे एक पैसा वसूल कर लेता।

लोगों ने सोचा कि यह सब सरकार की ओर से ही किया जा रहा था। अर्जी देनेवाले मुहर लगवाकर ही कर्मचारियों के पास भेजते। जल्दी ही यह रिवाज़-सा हो गया। अदालत के लोगों को भी यह मुहर देखने की आदत हो गई।

परन्तु किसी ने यह सोचने की कोशिश न की कि मुहर वहाँ क्यों थी, किसने लगाई थी, किसके हुक्म पर लगाई जा रही थी। शकुरा ने थोड़े दिनों में ही बहुत कुछ कमा लिया। फिर उसे डर लगा कि कहीं उसका भेद न खुल जाये, नवाब उसको पकड़ न ले और उसका सिर न कटवा दे। इसके लिए भी उसने एक उपाय सोचा। वह एक मुहर के लिए एक पैसा वसूल

मुरलीधर

न करके दो दो पैसा वसूल करने लगा। इसमें से एक वह खुद ले लेता और दूसरा जमा करके रखता।

इस तरह करते करते दस साल गुज़र गये। फिर न मालूम क्यों एक दिन शकुरा अदालत न आ सका। उस दिन जो अर्जियाँ पेश की गईं, उन पर मुहरें न थीं। गुमाश्ता ने कहा—"इन पर मुहरें नहीं हैं, ये नहीं ली जायेंगी।" बात होते होते बड़े कर्मचारी के पास गई। उन्होंने पूछ ताछ की कि यह मुहर है क्या! कौन इसे लगा रहा है!"

पुरानी अर्जियाँ मँगाकर देखी गईं। उनमें यह लिखा था, अन्धी सरकार, पीतल दरवाज़ा, शकुरा मुहरा। यह बात नवाब तक पहुँची। उसने शकुरा को पकड़कर लाने के लिए कहा। सिपाहियों ने शकुरा को लाकर नवाब के सामने हाज़िर किया। उसे डर था ही कि यह किसी न किसी दिन होगा। इसलिए वह जमा किये हुए पैसे लेकर नवाब के पास गया।

नवाब ने उससे पूछा—"तुम कौन हो! यह मुहर तुम्हारी ही है! किसने तुम्हें यह हक दिया है!"

शकुरा ने कुछ न छुपाया। उसने सब साफ़ साफ़ कह दिया। "आपके हिसाब में तीस हज़ार रुपये इकट्ठे हुए हैं, ये लीजिये रुपये।"

नवाब ने उसकी सूझबूझ की तारीफ़ की। उसको वह काम करने के लिए ही मुकर्रिर किया। मुहर में उसने "अन्धी" शब्द निकलवा दिया। बाकी मुहर वैसी ही रखी। शकुरा की मुहर बहुत दिनों तक चलती रही।

पूर्ण विश्वास

एक दिन कुछ ग्वालिनें, एक कस्बे में दूध बेचकर, अपने गाँव जा रही थीं, तो एक घर के बरान्डे में उन्होंने एक ब्राह्मण को पुराण पढ़ते देखा। स्त्रियों ने रुककर भी पुराण न सुना। परन्तु उस ब्राह्मण की एक बात उनके कान में पड़ी।

"ॐ, एक अक्षर काफ़ी है। उसकी सहायता से महासमुद्र भी पार किये जा सकते हैं।" वह कह रहा था।

यह एक बात ग्वालिनों के मन में घर कर गई। उनकी बुद्धियों को यह परम सत्य लगा। उन्हें रोज़ नदी पार करने के लिए ग्राम से आते जाते समय चार आने देने होते थे।

जब ब्राह्मण कह रहे हैं कि ॐ के उच्चारण से महासमुद्र पार किये जा सकते हैं, तो नदी पार करने के लिए नाव की क्या ज़रूरत है! रोज चार आने बचाये जा सकते हैं!

पुराण बाँचनेवाले उस ब्राह्मण पर उनको इतना विश्वास हो गया कि वे जब नदी के पास पहुँचीं, तो उन्होंने नाव की प्रतीक्षा न की। "ॐ" कहकर वे नदी में उतर पड़ीं। विश्वास के प्रभाव के कारण वे चलकर नदी पारकर गईं।

इसके बाद ग्वालिनें नाववाले को एक दमड़ी दिये बगैर ही नदी पार कर आतीं, दूध बेचकर, अपने गाँव वापिस चली आतीं

एक महीना हो गया। ग्वालिनों ने आपस में कहा—"शास्त्री जी की दया के कारण, हम रोज चार आने बचा लेती हैं। यदि वे हमें नदी पार करने का रहस्य न बताते, तो क्या होता! इसलिए हमें उनको कृतज्ञता दिखानी होगी। हम

स्वामी रामतीर्थ

एक दिन उनको घर बुलायेंगे और उनको पेट-भर खाना खिलायेंगे।"

ग्वालिनों ने जब भोजन के लिए निमन्त्रित किया, तो ब्राह्मण मान गया। उसको दावत देने का दिन भी निश्चित हो गया। उसको उस दिन बुला ले जाने के लिए उन स्त्रियों में से एक गई। ब्राह्मण उस स्त्री के साथ चल दिया। दोनों नदी के पास गये। ब्राह्मण खड़ा रह गया।

"अरे, आप रुक गये, चलिये चलें।" स्त्री ने कहा।

"नाव आने दो।" ब्राह्मण ने कहा।

"नाव किसलिए! पानी में चलकर जो पार हो जाइये।" कहती स्त्री नदी में उतर पड़ी। परन्तु ब्राह्मण उसके पीछे नहीं गया।

उस स्त्री ने वापिस आकर कहा—"आप ही की दया के कारण तो नाववाले को बिना कुछ दिये, हम नदी पारकर जाती हैं और फिर आप नाव की क्यों इन्तज़ार कर रहे हैं!" तब उसने बताया कि उस दिन उन्होंने क्या सुना था और कैसे उनका लाभ हुआ था।

"ओह, ऐसी बात है! तो मैं भी ॐ का नाम लेकर नदी पार करूँगा।" ब्राह्मण ने कहा। फिर उसने नदी के किनारे खड़े लोगों की सहायता से कमर में एक रस्सी बाँधी, रस्सी का सिरा उनके हाथों में थमाया और कहा—"अगर मैं डूबने लगूँ तो मुझे बाहर खींच लेना।" यों कहकर वह नदी में उतरा। परन्तु वह पानी में तैरा नहीं। किनारे खड़े लोगों को उसे बाहर खींचना पड़ा।

ॐ में उसको यदि पूर्ण विश्वास होता, तो वह ब्राह्मण न कमर में रस्सी बाँधता, न किनारे खड़े लोगों की सहायता ही माँगता। इसलिए ही वह पानी पर चल न सका।

चान्दनी में बैठा, बाबा पान चबाता कुछ सोच रहा था। चारों ओर बैठे बच्चे बाबा की ओर देखते सोच रहे थे कि बाबा कौन-सा श्लोक सुनाता है।

इतने में मन्दार के पौधे में कुछ आहट हुई। "क्या है यह?" बच्चों ने आपस में एक दूसरे से प्रश्न किये। वे हैरान थे। बाबा ने मन ही मन हँसते, सुंघनी निकालकर नाक में डाल, यह सुनाया :

"शब्द मात्रात्रमेतव्य
मज्ञात्वा शब्द कारणं;
शब्दहेतुं परिज्ञाय
सुमन्त्रो गौरवं गतः।"

अब यह पूछना चाहते हो कि इसका अर्थ क्या है। सुनो, सुनाता हूँ। इस श्लोक का अर्थ है, किसी भी शब्द से, बिना यह जाने कि वह क्यों हुआ है, भयभीत हो जाना अच्छा नहीं। सुमन्त्र को शब्द का कारण मालूम करने के कारण ही तो गौरव मिला।

बच्चे फूले न समाये। तालियाँ बजाकर वे कहने लगे—"बाबा, कहानी सुनाओ। सुमन्त्र कौन था बाबा, वह शब्द क्या है बाबा!" उन्होंने प्रश्नों की बौछार कर दी।

"ठहरो भी, वह कहानी सुनाता हूँ।" बाबा ने यों कहानी सुनानी शुरु की।

श्रीपर्वत नाम की एक जगह थी। उस श्रीपर्वत के बीचों बीच ब्रह्मपुर नाम का नगर था। उसका राजा था श्रीधर। जिस सुमन्त्र के बारे में मैंने कहा था, वह इसका महामन्त्री था। यदि श्रीधर प्रजा का परिपालन इतनी अच्छी तरह करता तो उसका आधा कारण सुमन्त्र ही था।

समझे न ? फिर यकायक नगर में एक अफवाह उड़ी। वह यह कि श्रीपर्वत पर कोई घंटाकर्ण नाम का राक्षस आया हुआ था। इसे महज अफवाह न समझना, कभी कभी घंटे की आवाज़ भी सुनाई पड़ती। घंटे की ध्वनि से लोग बहुत डर जाते। घंटाकर्ण के भय से बहुत से लोग नगर छोड़कर चले गये और जो रह गये थे, वे हथेली पर जान रखकर जी रहे थे।

यह देख राजा को चिन्ता हुई। उसने मन्त्री सुमन्त्र को बुलाकर कहा—"मन्त्री! लोगों का यह डर हटाना हमारा कर्तव्य है। इसका उपाय तुम ही सोचो।"

सुमन्त्र मान गया। बुद्धिमान तो था ही इसलिए पहिले उसने यह जानना चाहा कि घंटे की ध्वनि क्यों होती थी। वह उस तरफ़ गया, जिस तरफ़ से वह आवाज आती थी। जाकर उसने देखा कि न कोई राक्षस था, न वाक्षस। एक बन्दर पेड़ पर घूम रहा था, जब कभी उसे बजाना चाहता वह बजाता।

यह क्यों नहीं पूछते कि उसे घंटा कैसे मिला ? एक चोर घंटा चुराकर कहीं जा रहा था कि एक शेर ने उसे मार दिया। बन्दर उस घंटे को उठा ले गया। जब जी चाहता वह उसे बजाता।

घंटे की क्यों ध्वनि होती थी, अब मालूम हो गया न ? सुमन्त्र ने एक जगह फल वगैरह रखे और बन्दर को बुलाया। बन्दर घंटा दूर रखकर उन्हें खाने आया। सुमन्त्र घंटा लेकर शहर चला आया। जब असलियत लोगों को मालूम हुई तो उन्होंने डरना छोड़ दिया। राजा ने सुमन्त्र का आदर किया।

"देखा, आवाज होते ही न डरा करो। आवाज क्यों हुई यह पता लगाना चाहिये। समझे।" बाबा ने कहा।

[२]

इधर राजा अपनी लड़की के विवाह के लिए जब तैयारियाँ कर रहा था तब उधर अपनी प्रेमिका की प्रतीक्षा करता राजकुमार क्या कर रहा था !

उसने बहुत देर प्रतीक्षा की पर राजकुमारी वापिस न आई ! वह जहाँ उतरा था, रेगिस्तान था। जहाँ तक नज़र जाती, वहाँ तक रेत के टीले थे। कहीं घास पत्तियाँ न थीं। जैसे-जैसे सूर्य ऊपर चढ़ता जाता था, वैसे-वैसे गरमी भी बढ़ती जाती थी। जब ज़ोर से हवा चलती तो रेत एक तरफ़ हट जाती, एक टीला उठकर कहीं और बन जाता। राजकुमार को भूख सता रही थी। कहीं कोई शायद नाला हो, यह देखने के लिए वह उन रेत के टीलों में इतना घूमा कि उसके पैर दर्द के मारे टूट से गये।

यह सोच कि ऊँचाई से देखने पर और दूर देख सकूँगा, वह सबसे ऊँचे टीले पर चढ़ा। क्योंकि एक-एक कदम पर वह घुटने भर रेत में धुस जाता था, इसलिए चढ़ना बड़ा मुश्किल हो रहा था। उस टीले पर चढ़ने के लिए उसे ऐसी मेहनत करनी पड़ी जैसे किसी

महा पर्वत पर चढ़ रहा हो। टीले पर चढ़कर उसने चारों ओर देखने के लिए सिर घुमाया था कि इतने में पैरों तले रेत खिसकने लगी। उसे लगा जैसे किसी दल-दल में फँसा जा रहा हो। वह यूँही कुछ दूर धंस गया, फिर कहीं पैर जमाकर खड़ा हो सका। जब उसने सिर उठाया तो उसको फलों का एक बाग दिखाई दिया।

पेड़ चम-चमा रहे थे। उन पर फलों के बड़े-बड़े गुच्छे लटक रहे थे। पर वे सब कच्चे ही लगते थे।

पेड़ों और फलों को देखकर राजकुमार की जान में जान आई। वह बाग में घुस गया और लाल-लाल फलों को, जिनमें से पकने की कुछ-कुछ सुगन्धी आ रही थी, तोड़कर वह झट खा गया। ये फल बड़े स्वादिष्ट थे। उनको खाकर उसकी भूख भी मिट गई। इस तरह लाल फल खाकर उसे नींद आ गई। वह छाया में एक पेड़ के सहारे आराम से सो गया।

थोड़ी देर बाद उठकर उसने अपना मुँह जो पोंछा, तो बड़ी-सी दाढ़ी दिखाई दी। वह हैरान था। उसे न मालूम था कि इस बीच क्या हो गया था। उसकी दाढ़ी तो कभी न थी। वह इसी बात पर सोचता अचरज कर रहा था कि उसे फिर भूख लगी।

परन्तु इस बार वह लाल फलों की ओर न गया। उन्हें देखकर उसे सन्देह हुआ। इस बार वह हरे फलों के पास गया। टहनी झुकायी। फलों के गुच्छों में, कुछ पके-से फल छाँटकर उसने पेट-भर खाये। ये फल लाल फलों से भी अधिक स्वादिष्ट थे। वह खूब खा-पीकर फिर पेड़ के सहारे लेटकर सो गया।

जब वह उठा तो सूर्यास्त हो रहा था और अन्धेरा होने लगा था। वह अंगड़ाइयाँ ले रहा था कि सिर पेड़ के तने से जा लगा। उसे लगा कि उसका सिर पहिले से कहीं अधिक भारी था। जब उसने अपना सिर देखा भाला तो उसके हाथ दो सींग आये। यही नहीं उसकी दाढ़ी गज-भर बढ़ गई। सफेद भी हो गई। अपनी शक्ल देख कर ही उसका कलेजा रुक-सा रहा था।

"यह भी क्या नसीब है! राजकुमारी जो गयी तो वापिस न आई। और मेरी शक्ल यों बदल गई। अगर वह आ भी गई, तो कुछ काम न बनेगा। इस शक्ल में वह मुझे पहिचान न सकेगी। अगर मानलो मुझे पहिचान भी लिया तो इन सींग और दाढ़ी को देखकर मुझसे कैसे प्रेम करेगी! मैं सब कुछ खो बैठा, राजकुमारी और लकड़ी का घोड़ा, तो खो ही बैठा अब मैं अपने को ही खो बैठा हूँ। वह यों दुःखी होता, होता खीझ उठा और सो गया।

नींद में उसे एक सपना दिखा दिया। एक बूढ़ा सामने खड़ा हो, सिर सहला रहा

था। "क्यों, बेटा, क्यों यों दुःखी हो!" उसने पूछा। राजकुमार ने बूढ़े को अपनी सारी कहानी सुनाई।

"दुःखी न हो यदि तुमने नीचे गिरे हुए लाल फल और हरे फल खाये तो तुम्हारी शक्ल फिर बदल जायेगी। तुम्हारी दाढ़ी, मूँछे और सींग झड़ जायेंगे। तुम यह जगह छोड़कर कहीं चले जाओ। यह भूतों की जगह है। क्योंकि अभी वे सोकर नहीं उठे हैं, इसलिए ही तू जीवित रह गया है। उनके उठने का समय हो गया है।" बूढ़े ने कहा।

राजकुमार ये बातें सुनकर हैरान रह गया। सोकर वह उठा और आँखें मल रहा था कि आकाश में चन्द्रमा दिखाई दिया। ठंडी बयार चल रही थी। रेगिस्तान की रेत इधर उधर नहीं उड़ रही थी।

सपने में जिस प्रकार बूढ़े ने बताया था, उसने उसी तरह पेड़ों के नीचे, सूखे लाल और हरे फल उठा लिये। उन्हें उसने खा लिया। फिर जब उसने सिर और गाल टटोले, तो दाढ़ी मूँछ और सींग गायब थे।

फिर उसने कुछ घास लेकर एक टोकरी बुनली। उसमें उसने सूखे लाल फल, हरे फल, पके लाल फल डाल लिये और झट उस बाग से निकल पड़ा।

वह अपने देश चला जाना चाहता था। पर वह यह नहीं जानता था कि वह किस तरफ था। और क्या करता! वह ठीक नाक के सीधे-सीधे चल पड़ा। बहुत दूर गया, पर कहीं रेत के सिवाय कुछ नहीं दिखाई दिया जब भूख लगती, फल खालेता। थक जाने पर रेत में सो जाता।

सात दिन सात रात चलकर जैसे भी हो वह एक सड़क पर पहुँचा। उसकी जान में जान आ गई, सड़क के किनारे उसने लेटकर विश्राम किया।

थोड़ी देर बाद एक आदमी एक खच्चर पर सवार होकर सड़क पर आया, राजकुमार ने उससे पूछा कि वह सड़क कहाँ जाती थी, उस आदमी के बताने पर उसे यह मालूम हुआ कि पूरब की तरफ़ जाने से वह सड़क उसके देश की ओर जायेगी और पश्चिम की ओर जाने से राजकुमारी के देश की ओर।

"राजकुमारी और लकड़ी के घोड़े को खोकर, किस मुँह घर जाऊँ! अगर दम है, तो उसको ले जाकर ही रहूँगा।" सोचता राजकुमार पश्चिम की ओर पैर घसीटता-घसीटता चल पड़ा।
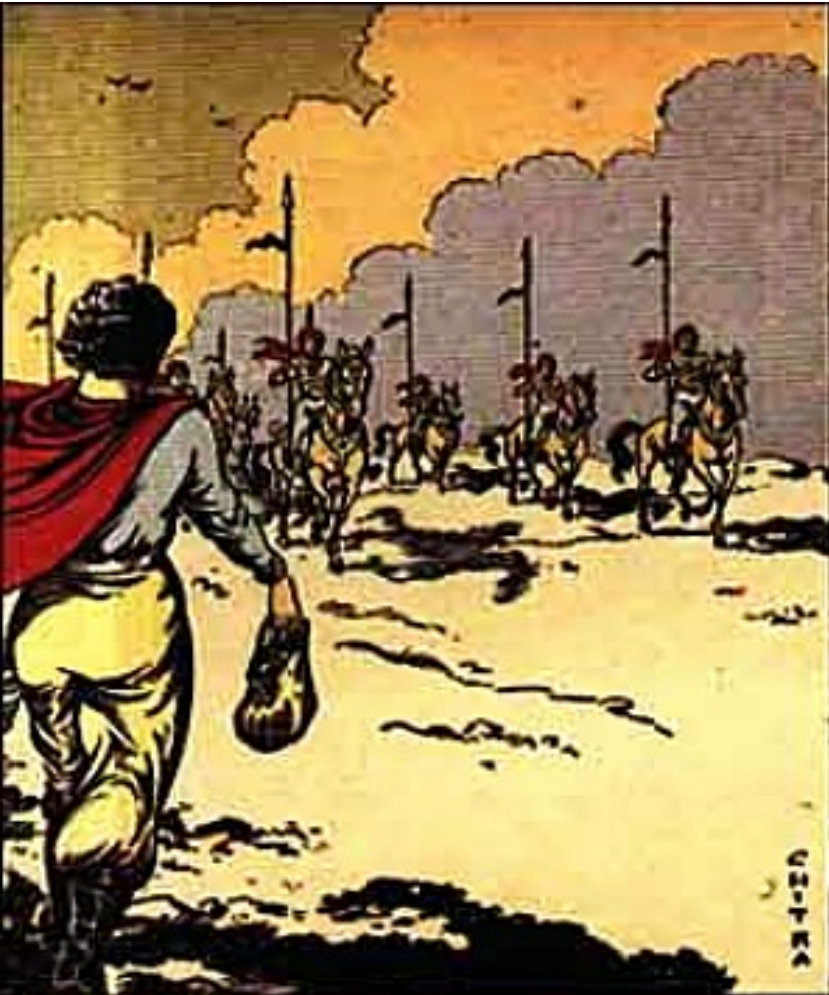
वह कुछ दूर गया था कि यात्रियों का एक बड़ा झुन्ड घोड़ों पर सवार होकर आ रहा था। सबके पास हथियार थे। घोड़े सब सजे धजे थे। देखने से ऐसा लगता था, जैसे कोई बड़ा-सा जलूस जा रहा हो। इस जलूस के बीच में एक राजोचित वाहन था। उसमें शीशों की खिड़की थी। सोने से काम किया गया था। चार अच्छे घोड़े गाड़ी को खींच रहे थे। उन पर रेशम और मखमल के कपड़े थे। जलूस बड़े ठाट-बाट से आ रहा था।

उस जलूस के चले जाने के लिए राजकुमार, सड़क के एक तरफ़ खड़ा हो गया। और जलूस देखने लगा। और जाने क्यों वह जलूस राजकुमार के पास आते ही रुका। उसमें से एक आदमी ने राजकुमार के पास आकर धीमे से पूछा—"क्या बेच रहे हो!"

"मैं तो कुछ नहीं बेच रहा।" राजकुमार ने आश्चर्य में कहा।

उस आदमी ने राजकुमार के हाथ में टोकरा देखकर कहा—"क्या ये फल नहीं हैं! हमारे युवराज बड़ी दूर से सफ़र करके आ रहे हैं। उन्हें बहुत प्यास लग रही है। भूख लग रही है। मेहरबानी करके हमें कुछ फल बेचो।" उसने उसको मना मनाकर कहा।

"ये फल बेचने के लिए नहीं हैं। मेरे खाने के लिए हैं। कहीं आपको यहाँ घास का तिनका दिखाई दिया! इन्हें बेचकर

CHITRA

मैं क्या खाऊँगा ?" राजकुमार ने पूछा। इस बीच युवराज ने गाड़ी में से अपने आदमी को जल्दी बुलाया। उसके बाद एक और आदमी को एक और सोने का सिक्का देकर कहा—"यह लड़का जितना माँगे उतना दे आना।"

राजकुमार ने पहिले आदमी से पूछा—"आप सब कहाँ जा रहे हैं?"

"हमारे युवराज फलाने नगर की राजकुमारी से विवाह करने जा रहे हैं।" उस आदमी ने जवाब दिया पश्चिम की ओर हाथ दिखाते हुए।

राजकुमार चकित था। परन्तु उसने अपना आश्चर्य छुपाये रखा और और बातें भी पूछीं। यह बात साफ हो गई कि यह राजकुमार उसकी प्रेमिका से ही विवाह करने जा रहा था। उसने सोने के सिक्के ले लिए, और बड़े बड़े दो दो लाल फल और हरे फल दिये।

युवराज उनको बड़े चाव से खा गया। उसे तुरत नींद आ गई। युवराज, गाड़ी में आगे चला गया। थोड़ी देर बाद युवराज उठकर घबराकर चिल्लाने लगा। यह जानने के लिए कि क्या हुआ था, उसके मन्त्री भागे भागे गाड़ी के पास आये। परन्तु गाड़ी में उनको युवराज नहीं दिखाई दिया। दो सींगोंवाला और दाढ़ीवाला एक विचित्र पशु दिखाई दिया।

युवराज की यह हालत फल बेचनेवाले लड़के के कारण ही हुई थी, मन्त्रियों ने अनुमान किया। उन्होंने जलूस रोक दिया। और प्रतीक्षा करने लगे कि कब राजकुमार उनसे आकर मिलता है।

(अगले अंक में समाप्त)

नौकरी पर आये छः महीने हो गये हैं।
डब्बे में से खत निकालना कब सीखोगे?
क्यों, क्या करते थे पहिले?
यों देख क्या रहे हो!

"हरि...! क्या हमारी बहिन ने कहा है कि
उसकी उम्र बीस साल है। उसे पाँच साल
तक गिनती नहीं आती थी। इसलिए ही
बीस की हो गई है। चाक्लेट दो...।

सब कह रहे हैं कि भाई माँ पर है। शायद
इसीलिए ही पिता जी को गुस्सा आ गया,
और उन्होंने अपनी मूँछें जैसी मूँछें उसके
भी लगा दीं।

लड़की : पैसा का बैलून दो।

लड़का : एक पैसा का पिन तो दो।

चित्रकार : **एस. शंकरनारायण**

महाकवि भारवी

संस्कृत के कवियों में कई बहुत प्रसिद्ध हैं। उनमें भारवी भी है। इसके बारे में एक कहानी प्रचलित है। भारवी का पिता भवानी भट्ट बड़ा पंडित था। उसने अपने लड़के को भी पंडित बनाया। बीस वर्ष की आयु होते होते भारवी उद्दंड पंडित हो गया, पिता को भी मात करने लगा।

जब विद्वान, भवानी भट्ट के सामने भारवी की प्रशंसा किया करते तो वह चुप न रहता, कहा करता—"वह अभी बच्चा है। उसे कुछ नहीं आता जाता।" जब कभी वह उसके बारे में इस तरह कहता, तो भारवी को कष्ट होता और पिता पर क्रुद्ध हो उठता।

एक बार पंडितों की एक सभा हुई। उस सभा में जो वाद-विवाद हुए, उनमें भारवी ने बड़े बड़े पंडितों को हरा दिया। सभा में सबने भारवी की प्रशंसा की। भवानी यद्यपि मन ही मन प्रसन्न था, तो भी जब औरों ने उसके पुत्र की प्रशंसा की तो उसने उसका विरोध किया।

पिता की बातें सुनकर भारवी अपने को निरुत्साहित, अपमानित समझने लगा। सभा से घर पहुँचते ही उसने अपनी माता से कहा—"माँ, पिता जी को मेरी ख्याति पर ईर्ष्या हो रही है। जो कोई मेरी प्रशंसा करता है, उसे रोकते हैं और मुझे अपमानित करते हैं। मैं अब यह नहीं सह सकता, मैं कहीं चला जाऊँगा। कम से कम तुम उनसे कहकर देखो।" थोड़ी देर बाद भवानी भी घर पहुँचा। उसकी पत्नी ने जो कुछ पुत्र कह गया था, सुनाया।

भवानी ने कहा—"क्या हमारा लड़का इतना भी नहीं जानता? क्या पिता पुत्र की प्रशंसा कर सकता है? यदि दूसरे

उसकी प्रशंसा करे, तब भी चुप नहीं रहना चाहिए। पिता के लिए पुत्र की प्रशंसा करना, अपनी प्रशंसा करना है। वह पुत्र ही उन्नति के लिए ठीक नहीं है। लगता है, यह यह नहीं जानता है। तुम ही कहकर देखो। मैं शुरु से जानता हूँ कि वह बड़ा पंडित होगा और हमारे वंश के लिए ख्याति और प्रतिष्ठा लायेगा।"

पिता की बातें, भारवी ने बगल के कमरे में सुनीं। वह पश्चताप के कारण लज्जित हुआ। वह पिता के पैर पड़ा। अपना अपराध स्वीकार किया और पिता से कहा कि उसको प्रायश्चित्त की कोई विधि बतायें।

भवानी भट्ट ने लड़के को उठाकर कहा—"बेटा, तुम साल भर ससुराल में रहो। वह ससुराल गया। सप्ताह-भर, सास ने उसका खूब आदर सत्कार किया। उसके बाद ससुर ने बहुत मीठे ढंग से यह जानना चाहा कि वह क्यों आया था। भारवी ने न बताया कि क्या हुआ था। उसने कहा कि उसकी पिता से नहीं बन रही थी और इसलिए वह चला आया था।

इसके बाद जमाई का आदर सत्कार यकायक बन्द हो गया। साले उसको रोज खेत में काम करने के लिए ले गये। क्योंकि

यह सब उसके लिए प्रायश्चित्त ही था, इसलिए जो वे कहते, भारवी करता। थोड़ा समय बीता। भारवी को कहा गया कि रात दिन खेत में रहकर वह फसल देखे। उसकी पत्नी खेत में ही उसके लिए खाना ले जाती।

इतने में श्रावण मास आया। पत्नी ने कहा कि सब व्रत कर रहे हैं, मुझे भी व्रत करने की इच्छा हो रही है। परन्तु मेरे पास पैसा नहीं है। कहती कहती वह रो भी पड़ी।

भारवी खेतों में पहरा तो दे ही रहा था, साथ "किरातार्जुनीयं" नामक ग्रन्थ

भी लिख रहा था। उसमें से एक ताट पत्र लेकर उसने पत्नी को देते हुए कहा—"इस गाँव में फलाना बनिया विद्वान है। वह जानता है कि मैं कवि और पंडित हूँ। इस श्लोक को उसके यहाँ गिरवी रखो और जितना तुम पैसा चाहो ले लो। उससे कहना कि जब तक मैं उस श्लोक को न छुड़वा लूँगा, मैं अपना ग्रन्थ न प्रकाशित करूँगा।

भारवी की पत्नी ने पति के दिये हुए श्लोक को ले जाकर बनिये को दिया। बनिया ने उसकी बात सुनी। हिसाब में लिख कर उसको कुछ धन दिया। उसने श्लोकवाले ताट पत्र और एक घंटे को एक बाँस में रख, छप्पर में रख दिया।

इसके कुछ दिनों बाद, वह व्यापार के लिए नौकाओं में परदेश गया, रास्ते में तूफ़ान आया। नौका टूट गई। बनिया जैसे तैसे बचकर, एक और द्वीप में पहुँचा और उसने वहाँ नाना कष्ट उठाये। इस बीच भारवी ससुराल में एक वर्ष बिता पत्नी को लेकर घर चला गया। जब उसने

बनिये का ऋण चुकाकर ग्रन्थ प्रकाशित करवाना चाहा, तो बनिये का कहीं पता न लगा। उसको व्यापार पर गये अट्ठारह वर्ष बीत गये। सबने सोचा कि वह कहीं मर गया होगा। परन्तु भारवी ने निश्चय किया कि जब तक उसकी मौत के बारे में ठीक ठीक नहीं मालूम हो जाता, तब तक पुस्तक प्रकाशित न करूँगा।

बनिये के पत्नी ने उसके चले जाने के कुछ मास बाद एक लड़के को जन्म दिया। जब उसकी उम्र अट्ठारह वर्ष की हुई, तब बनिया वापिस आया। "यह हमारा लड़का है।" पत्नी ने पति को अपना लड़का दिखाया। बनिया व्यापार पर जाते समय यह भी न जानता था कि उसकी पत्नी गर्भवती थी। इसलिए उसे शक हुआ। उसको मारने के लिए जो चारों तरफ़ वह घूमा, तो सामने बाँस में उसे घंटी दिखाई दी। उससे उसने पत्नी को मारना चाहा, बाँस में से घंटी जो निकाली, तो ताड पत्र नीचे गिर गया। बनिया ने उस पर लिखे श्लोक को यों पढ़ा।

"सहसा विदधीतनक्रियां
अविवेक: परमापदां पदं
वृणुतेहि विमृश्यकारिणं
गुणलब्धा: स्वयमेव सम्पद:"

जल्दी में कुछ भी न करो। अविवेक के कारण आपत्तियाँ आ पड़ती हैं। गुणों के अनुसार सम्पत्ति मिलती है और जो सोच समझकर सब कार्य करता है, उसमें ही गुण होते हैं। यह श्लोक का अर्थ है। इस श्लोक ने बनिये को सावधान कर दिया। इसलिए उसने अपने क्रोध को वश में कर लिया। अपने बन्धु-बान्धवों से बातचीत की। मालूम किया कि जब वह गया था, तो उसकी पत्नी गर्भवती थी और वह लड़का उसका ही था। उसे यह जानकर बड़ा सन्तोष हुआ कि उस श्लोक ने उसका कितना उपकार किया था। भारवी को भी मालूम हुआ कि बनिया दूर देशों से वापिस आ गया था। वह पैसा लेकर श्लोक छुड़वाने आया।

बनिये को यह सुन बड़ा आश्चर्य हुआ, क्योंकि भारवी ने यह श्लोक गिरवी पर रख रखा था, इसलिए उसने अपना ग्रन्थ प्रकाशित न किया था। उसने भारवी से कहा—"महोदय, अपका चारित्र्य आश्चर्य जनक है। मैं नहीं सोचता कि इस संसार में और भी कोई ऐसा है, जो इतना वचनबद्ध है। और आप यदि ऋण के बारे में जानना चाहते हो, तो मैं कहना चाहूँगा कि किसी भी हालत में मैं उसे न लूँगा। श्लोक ने मेरी पत्नी और पुत्र के प्राणों की रक्षा की है। इस श्लोक का मूल्य देना किसी के लिए सम्भव नहीं है। उसने अपना सारा वृत्तान्त सुनाया। बनिया ने ऋण तो लिया ही नहीं, उल्टा उसको एक सौ सोलह सोने के सिक्के देकर उसका आदर किया।

सरकस का शेर

एक सरकस का शेर पिंजड़े से निकलकर जंगल में भाग गया। जंगल के प्राणी उसे देख डर के मारे भागने लगे। शेर ने उनसे कहा—"मैं सरकस का शेर हूँ। तुम्हें कोई भय नहीं है। शिकार करना मैं भूल गया हूँ। मालिक जब कुछ देता तो खा लेता, नहीं तो भूखा पड़ा रहता।"

शेर की बातें सुनकर प्राणियों को कुछ हौसला हुआ। "जब तुम्हें शिकार खेलने की तकलीफ़ न थी और मालिक ही तुम्हें भोजन देता था, तो क्यों नहीं आराम से वहीं रहे।" प्राणियों ने पूछा।

"शायद तुम हमारे मालिक के बारे में नहीं जानते हो। वह बड़ा क्रूर है। हमें आग में से कूदने के लिए कहता। पीपों पर खड़ा करके बन्दरों की तरह नाचने के लिए कहता। अगर हम यह न करते तो हन्टर से धुन देता। हन्टर बजता कि नहीं, मैं काँप उठता।" शेर ने कहा।

शेर को देखकर सब को दया आई। शेर ने भी सब प्राणियों के साथ आराम से समय काटा। जब उसे अगले दिन भूख लगी, तो वह एक हरिण को मारकर खा गया। यह देख प्राणी डरने लगे। तब एक भालू ने कहा कि वह शेर का भेद जानता था। उसने एक पेड़ की जड़ उखाड़ी, उसे हन्टर की तरह घुमाता वह शेर पर कूदा। सरकस का शेर हन्टर देखते ही उस जंगल से सिर पर पैर रखकर भाग गया।

१. महेश कुमार गुप्ता, अमरावती.

जिस माह फोटो परिचयोक्तियाँ छपती हैं, तथा पुरस्कृत की जाती हैं, साधारणतया उसके कितने दिनों के बाद आप पुरस्कार भेज देते हैं ?

यथा शीघ्र...करीब करीब तुरंत ।

२. अनिलकुमार लाहोटीया, बम्हरौली.

क्या "चन्दामामा" में हम बच्चों की रचनायें प्रकाशित हो सकती हैं ?

हाँ, क्यों नहीं, बशर्ते की रचना अच्छी हो ।

३. एम. एस. धर्मा, जालन्धर.

फोटो प्रतियोगिता के लिए हम कितनी पंक्तियाँ भेज सकते हैं ?

प्रतियोगिता, वस्तुतः शीर्षकों की है, और शीर्षक जितने संक्षिप्त होंगे, उतने ही अच्छे होंगे ।

४. अनन्त किशोर, आगरा.

क्या लेखक अपनी कहानियों के साथ चित्र भी बनाकर भेजते हैं या आप ही उन्हे अपनी इच्छानुसार बनाते हैं ?

"चन्दामामा" के लिए चित्र "चन्दामामा" का चित्रकार वर्ग ही बनाता है ।

५. एस. जसवन्तसिंह, ग्वालियर.

आपको पहिले भी मैं कई प्रश्न पूछ चुका हूँ। आपने उत्तर नहीं दिये। क्या आप अपने प्रिय पाठकों को ही उत्तर देते हैं ?

हमारे लिए सभी पाठक प्रिय हैं। हम कोई पक्षपात नहीं करते। उत्तर प्रश्न पर निर्भर है, व्यक्ति पर नहीं।

६. कवलपीत सिंह, धर्नपुर न्यू टाऊन.

दास वास और टाईगर कहाँ रहते हैं—आप उनका पता बतायेंगे ?

हाँ, वे कहाँ रहते हैं ! शायद "चन्दामामा" के अन्तिम पृष्ट में ही। डाक उन तक न पहुँचेगी, इसलिए फिक न कीजिए।

अगर कोई पत्र इंग्लिश में लिखे तो आप उस पत्र का उत्तर किस भाषा में देंगे ?

अंग्रेजी में ही।

७. मोहनलाल तंगर, जोधपुर.

क्या हम प्रश्न के साथ अपना फोटो भेज सकते हैं ?

आपने देखा होगा कि हम इस स्तम्भ में—फ़ोटो का उपयोग नहीं करते—साफ है कि फ़ोटो भेजना अनावश्यक है।

क्या एक पत्र में दो तीन आदमी साथ प्रश्न भेज सकते हैं ?

हाँ।

८. मधुकर काशिनाथराव सौदागर, लाहूर.

"चन्दामामा" का उद्देश्य क्या है?

किशोरों को शिक्षाप्रद, रोचक, मनोरंजक कथा साहित्य देना।

९. नवीन कुमार अग्रवाल, कसियाग.

क्या मुझे पुरानी "चन्दामामा" की प्रतियाँ मिल सकती हैं ?

हमें खेद है, नहीं।

१०. गोविन्दराज अग्रवाल, खरसियत.

यदि हम कहानी "चन्दामामा" में प्रकाशित करने के लिए भेजें, तो उसका पता क्या है?

संचालक "चन्दामामा" २, ३, आर्काट रोड, वडपलनी, मद्रास - २६.